जिनभाषित

जुलाई-अगस्त 2001, संयुक्तांक

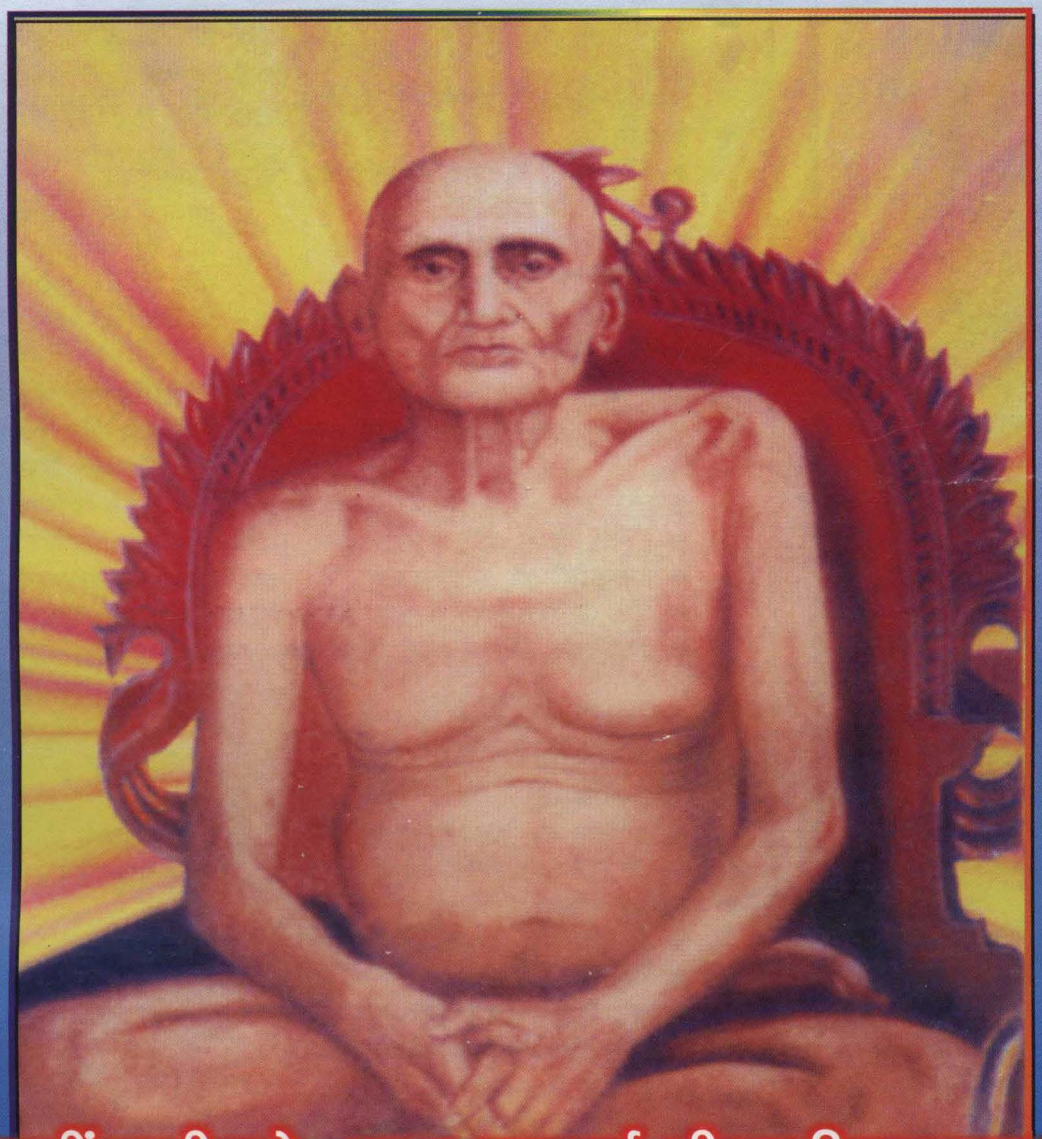

बीसवीं शती के आद्य आचार्य श्री शान्तिसागर जी

समाधि दिवस

पर्वराज पर्युषण

वीर नि.सं. 2527

भाद्रपद शुक्ल 2, वि.सं. 2058

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

जिनभाषित

मासिक

जुलाई-अगस्त 2001
संयुक्तांक

वर्ष 1

अङ्क 2-3

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
137, आराधना नगर,
भोपाल-462003 म.प्र.
फोन 0755-776666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द लुहाड़िया
पं. रतनलाल बैनाडा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के. मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश राणा, जयपुर

◆

द्रव्य-औदार्य
श्री अशोक पाटनी
(मे. आर.के. मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428,352278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

		पृष्ठ
◆ **सम्पादकीय** : आचार्य श्री शान्तिसागर जी का समाधि दिवस		3
◆ **लेख** :		
◆ आचार्य श्री शान्तिसागर	: मुनि श्री क्षमासागर	5
◆ **पूजा** :		
आचार्य श्री शान्तिसागर जी की पूजा	: मुनि श्री योगसागर	7
◆ **प्रवचनांश**		
● मोक्ष मार्गी के लिये चिन्ता नहीं, चिन्तन आवश्यक	: आचार्य श्री विद्यासागर	8
● धार्मिक और धर्मात्मा	: मुनि श्री समतासागर	10
● लाखों घर बर्बाद हुए...	: मुनि श्री प्रमाणसागर	11
● हर समस्या सुलझेगी...	: आर्यिका श्री पूर्णमती	13
◆ **लेख** :		
● पर्वराज पर्युषण : प्रदूषण मुक्ति का पर्व	: डॉ. सुरेन्द्र भारती	14
● भक्ति, स्वाध्याय एवं क्षमादिभावों का मनोविज्ञान	: प्रो. रतनचन्द्र जैन	16
● क्या आप भी हैं 'वेजिटेरियन'	: डॉ. राजीव अग्निहोत्री	21
● बढ़ता गोवध और प्रदूषित होता दूध	: डॉ. श्रीमती ज्योति जैन	22
● एकजुटता की आवश्यकता	: डॉ. श्रेयांसकुमार जैन	26
● शोध सम्भावनाओ से भरा जैन साहित्य	: डॉ. कपूरचन्द्र जैन	28
● इक्कीसवीं सदी में जैन संस्कृति का भविष्य	: कुमार अनेकान्त जैन	30
● राष्ट्रीय जनगणना में जैन समुदाय	: सुरेश जैन आई.ए.एस.	36
◆ **शंका समाधान**	: पं. रतनलाल बैनाड़ा	19
◆ **नारी लोक** :		
● कर्नाटक की ऐतिहासिक श्राविकाएँ	: प्रो. विद्यावती जैन	24
◆ **व्यंग्य** : दोषारोपण का खेल	: शिखरचन्द्र जैन	33
◆ **कविता/गीत/गज़ल/भजन** :		
● श्री सम्यक्त्व भारती		12
● अशोक शर्मा		15
● डॉ. नरेन्द्र 'भारती'		18
● डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'		18
● कविवर दौलतराम जी		23
● मुनि श्री निर्णयसागर		35
● ऋषभ समैया जलज		35
● मुनि श्री क्षमासागर		आवरण पृष्ठ 3
◆ **बालवार्ता** :		
● एक वृक्ष की अन्तर्वेदना	: शुद्धात्म प्रकाश जैन	34
◆ **आदर्श कथा** : मन के भूत	: यशपाल जैन	37
◆ **तीर्थक्षेत्र परिचय** : सुदर्शनोदय तीर्थ	: अशोक धानोत्या	38
◆ **चातुर्मास विवरण**		39
◆ **विशेष समाचार**		1,2
◆ **समाचार**		6,9,12,13,15,26,29,32,37,44
◆ **आपके पत्र : धन्यवाद**		43

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष समाचार

मेनका ने घुड़सवारों को चमड़े की चाबुक इस्तेमाल करने से रोका

अब घुड़दौड़ के पेशे में लगे लोगों पर पशुप्रेमी मेनका गाँधी की गाज गिरने वाली है। मेनका गाँधी ने घुड़सवारों द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले चमड़े के चाबुक के इस्तेमाल पर रोक लगा दी है। मेनका गाँधी का तर्क है कि घोड़े को तेज दौड़ाने के लिय चमड़े के चाबुक मार कर इस निरीह प्राणी पर अत्याचार किया जाता है। गाँधी ने इस पारंपरिक चाबुक के स्थान पर कुछ हल्के फाइबर के चाबुकों के इस्तेमाल करने को कहा है। मेनका गाँधी के इस कदम से हार्स रेसिंग से जुड़े लोगों में हड़कम्प मच गया है।

जीव जन्तु के संरक्षण में लगी केन्द्रीय सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्री मेनका गाँधी ने घुड़दौड़ को पशु प्रदर्शन अधिनियम के तहत लाकर घोड़ों के साथ सहानुभूति पूर्वक व्यवहार करने का आदेश दिया है। मेनका गाँधी का कहना है कि पारंपरिक चाबुकों के इस्तेमाल से घोड़े को बहुत पीड़ा पहुँचती है, जो कि एक बेजुबान प्राणी पर अत्याचार है। गाँधी ने इसके स्थान पर वैज्ञानिक तौर पर परीक्षण किए गए हवा को सोखने वाले गद्देदार चाबुक इस्तेमाल करने का आदेश दिया है ताकि घोड़ों को चोट न पहुँचे।

मेनका गाँधी के इस आदेश ने घुड़सवारों को परेशानी में डाल दिया है। घुड़सवारों का कहना है कि हल्के चाबुकों के इस्तेमाल से घोड़ों पर कोई असर नहीं पड़ेगा। घुड़सवारी के पेशे से जुड़े लोगों ने अरबों रुपये के इस खेल को जीवित बनाए रखने के लिये अदालत का दरवाजा खटखटाया है। भारतीय घुड़सवार संघ ने मुम्बई की एक अदालत में इस आदेश के खिलाफ स्थगनादेश भी प्राप्त कर लिया है। लेकिन घुड़दौड़ से जुड़े अधिकारियों ने बिना किसी विवाद में पड़े हल्के फाइबर के चाबुकों के इस्तेमाल का मन बना लिया है। इसी हफ्ते विभिन्न रेसिंग क्लबों के घुड़दौड़ अधिकारियों ने केन्द्रीय मंत्री मेनका गाँधी से मुलाकात कर उनके आदेश पर अमल करने पर सहमति जता दी है।

सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्रालय के सूत्रों के मुताबिक दो प्रकार के हल्के चाबुकों का इस्तेमाल करने को कहा गया है। घुड़सवार को इन्हीं दोनों में से किसी एक का इस्तेमाल करना होगा। गौरतलब है कि जीवजन्तु प्रेमी मेनका गाँधी पहले घुड़दौड़ में चाबुकों के इस्तेमाल पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगाने पर विचार किया था, लेकिन बाद में घुड़दौड़ अधिकरियों के हल्के चाबुकों का प्रयोग करने के कहने पर उन्होंने अपना इरादा बदल दिया। मुंबई में घुड़सवारी चैंपियन पेसी श्रॉफ ने कहा कि बिना चमड़े के चाबुक का इस्तेमाल किये घोड़े पर कैसे नियंत्रण रखा जा सकता है? सदियों से घोड़े को काबू करने के लिये चमड़े के नाजुक चाबुक का घोड़े पर कुछ भी असर नहीं होगा। घुड़सवार संघ के ध्यक्ष सिनक्लेर मार्शल ने कहा कि हम नाजुक कोड़े का प्रयोग नहीं करने की माँग पर अड़े रहेंगे। इस आदेश को मानने से घुड़दौड़ का रोमांच खत्म हो जाएगा और घोड़ा हमारे हिसाब से नहीं हम घोड़े के हिसाब से दौड़ेंगे।

'अमर उजाला' 25 जून 2001 से साभार

विषधर के लिए विज्ञापन

अंग्रेजी टीवी धारावाहिक बेवॉच में दर्शकों को मुग्ध करने वाली अभिनेत्री जेना ली नेलिन अब एक नयी भूमिका में नजर आ रही हैं। वन्य जन्तुओं की हत्या कर चलाये जा रहे अवैध व्यापार के विरुद्ध पेटा के अभियान में शरीक जेना ने इसके पहले विज्ञापन में सनसनीखेज भूमिका निभाकर दर्शकों के होश उड़ा दिए हैं। पेटा द्वारा जारी किये गये विज्ञापन में जेना एक साँप के रूप में नजर आयी हैं। निर्वस्त्र शरीर पर साँप का पैटर्न उभारने के लिए जेना को मेकअप में सात घण्टे देने पड़े।

जेना का कहना है कि यदि आपको साँप और घड़ियाल खूबसूरत और मासूम नहीं लगते तो कम से कम यह तो याद रखिये कि उन्हें भी अन्य जीवों की भाँति कष्ट होता है। साँप की खाल के बैग, जूते अथवा जैकेट के लिए जीवित ही उनकी खाल खींच ली जाती है। इस पीड़ा से वे कुछ घण्टों से लेकर एक-दो दिन तक तड़पते रहते हैं, जब तक उनकी मौत नहीं हो जाती।

खाल प्राप्त करने के लिये घड़ियालों की 'खेती' की जाती है। घड़ियालों को छोटे-छोटे पिंजड़ों में रखा जाता है जो मांस, मल और सड़ते पानी की बदबू से गँधाते रहते हैं। प्राकृतिक रूप से घड़ियाल 60 साल तक जीवित रह सकते हैं परन्तु इन फार्मों में उन्हें चौथे जन्मदिन से पूर्व ही नृशंसता पूर्वक मार दिया जाता है। इन्हें मारने के लिये हथौड़ों से कूटा जाता है और कभी-कभी तो दो घण्टे की यातना सहने के बाद भी उनके प्राण नहीं निकलते। साँपों और छिपकलियों की खाल जीवित अवस्था में खींच लीजाती है। इसके पीछे विश्वास यह है कि जीवित अवस्था में खींची गयी खाल अधिक मुलायम रहती है।

जेना का सुझाव है कि जिन लोगों को पशुओं की खाल से बने वस्त्र पसंद हैं उन्हें कृत्रिम रूप से बनाये गये खाल के वस्त्र और चीजें खरीदनी चाहिए. प्लेदर इनमें से एक है। रोहित बल, मार्क बावर, टॉड ओल्डहैम और स्टैला मैककार्टिनी जैसे दिग्गज डिजायनर कभी भी पशुओं की खालों का प्रयोग नहीं करते। रिनाल्डी डिजायन जैसे फैशन बुटिक में ग्राहकों को कृत्रिम अजगर, छिपकली और मगरमच्छ की खालों से बने हैण्ड बैग, बैल्ट और जूते मिल सकते हैं। ''यह साँप का वर्ष है'' जेना कहती है, ''इसलिए यह उन्हें जीवित रहने का अधिकार देकर मनायें।''

'दैनिक जागरण' 17 जून 2001 से साभार

फिल्मी सितारों में जगा पशु प्रेम

मुम्बई। फिल्मी सितारों में पशुओं के प्रति प्रेम जागा है। हेमा मालिनी, मनीषा कोईराला, अक्षय खन्ना, जैकी श्रॉफ आदि लगभग दर्जन भर सितारों ने 'पेटा' नामक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्था के उस ज्ञापन पर हस्तक्षर किए हैं जिनमें पशु के खिलाफ जारी अत्याचार पर रोक लगाने के लिये मौजूदा कानून को और कड़ा करने की माँग की गई है। 'पेटा' का कहना है कि मौजूदा कानून, जो 40 साल पहले पास किया गया था, उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया है तथा इसमें पशु पर अत्याचार के लिए बहुत ही कम सजा है। इस कानून के बारे में अभिनेत्री जूही चावला का कहना है कि मंत्री को इस कानून में मौजूदा स्थिति के अनुरूप परिवर्तन करना चाहिए तथा पशुओं को पर्याप्त संरक्षण दिया जाना चाहिए। ओमपुरी का कहना है कि मौजूदा कानून में संशोधन से पुलिस को पशुओं पर अत्याचार करने वालों के खिलाफ सख्त कार्रवाई करने का मौका मिलेगा।

नवभारत, मुम्बई, 7 जून 2001 से साभार

हस्ताक्षर से व्यक्त समर्थन

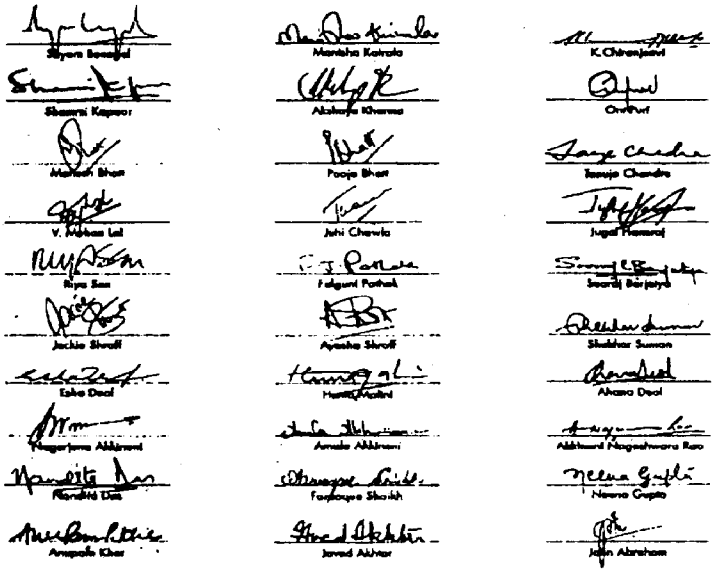

भोपाल में यांत्रिक कत्लखाने का निर्माण स्थगित

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल में नगर निगम द्वारा यांत्रिक कत्लखाना खोला जाना तय हुआ था। खबर लगते ही मांस निर्यात निरोध परिषद् के कार्यकर्ता श्रीपाल जैन 'दिवा' ने आर्यिका श्री पूर्णमती माताजी की चातुर्मास स्थापना के अवसर पर भाषण देते हुए कत्लगृह खोले जाने का घोर विरोध किया। माताजी ने भी अपने प्रवचन में एक जुट होकर विशाल रैली के द्वारा इसे रोकने की प्रेरणा दी। दिनांक 14 जुलाई को तिलवारा घाट में भी श्री विद्यासागर जी के समक्ष धर्मसभा में दिवा जी ने अपने विचार व्यक्त किये और कत्लखाना नहीं खुलने देने का निश्चय प्रकट कर आचार्यश्री से आशीर्वाद लिया।

आर्यिका श्री पूर्णमती माता जी के सान्निध्य में समाज के प्रमुख लोगों की एक बैठक हुई जिसमें तय हुआ कि मुख्यमंत्री जी से पहले चर्चा की जाए, फिर ज्ञापन-आन्दोलन की कार्यवाही की जाये। इस हेतु आनन्द तारण एवं अशोक जैन भाभा ने मुख्यमंत्री जी से चर्चा की। उनका रुख अनुकूल हआ।

करीब 500 जैन बन्धुओं एवं जैनेतर अहिंसक समाज, जैसे आर्यसमाज, गायत्री शक्तिपीठ आदि ने मिलकर मुख्यमंत्री जी को ज्ञापन सौंपा। एक ज्ञापन महापौर श्रीमती विभा पटेल को भी दिया। श्रीमती विभा पटेल माताजी के दर्शन के लिये श्री दिगम्बर जैन मंदिर 3 बजे पधारीं। माताजी ने देशना दी। महापौर के मन में भारी उथलपुथल मची। उन्होंने पार्षदों की बैठक बुलाई और तय किया कि यांत्रिक कत्लखाना भोपाल में अहिंसा वर्ष में नहीं खोला जावे। 4 घंटे कीबैठक के बाद रात्रि 9 बजे पुनः महापौर मंदिर आईं और माताजी को हर्षप्रद समाचार दिया कि आपकी भावना के अनुकूल यांत्रिक कत्लखाने का निर्माण स्थगित कर दिया गया है।

इस हेतु श्री दिगम्बर जैन मंदिर समिति टिन शेड टी.टी. नगर,चातुर्मास व्यवस्था समिति एवं सकल जैन समाज ने मुख्यमंत्री जी एवं महापौर के प्रति आभार प्रकट किया।

जैनमुनि के साथ अभद्र व्यवहार करने वाले युवकों की गिरफ्तारी की माँग

सिलवानी (म.प्र.) में दिगम्बर जैन मुनि श्री विश्ववीरसागर जी महाराज के आहारचर्या के लिये जाते समय समुदाय विशेष के तीन युवक लट्ठ लेकर खड़े हो गये और मुनिश्री के साथ अभद्र व्यवहार किया। घटना की जानकारी मिलते ही दिगम्बर जैन समाज में रोष की लहर दौड़ गई। अखिल भारतवर्षीय दि. जैन महासमिति ने इस दुःखद घटना की निन्दा की है और म.प्र. के मुख्यमंत्री को पत्र लिखकर अपराधियों को अतिशीघ्र गिरफ्तार करने की माँग की है, ताकि कोई अप्रिय स्थिति उत्पन्न न हो।

माणिकचंद जैन पाटनी
राष्ट्रिय महामंत्री,
दिगम्बर जैन महासमिति, इंदौर (म.प्र.)

जैनं जयतु शासनम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

बीसवीं शती के आद्य आचार्य श्री शान्तिसागर जी का समाधि दिवस

भाद्रपद शुक्ल द्वितीया स्व. आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज का समाधिदिवस है। वे बीसवीं सदी के आद्य आचार्य थे। स्व. पं. सुमेरुचन्द्र जी दिवाकर ने अपने 'चारित्रचक्रवर्ती' नामक ग्रन्थ में लिखा है कि बीसवीं शती के आरम्भ होने तक सैकड़ों वर्षों से उत्तरभारत के श्रावकों को दिगम्बर जैन मुनियों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। इसका खुलासा करते हुए वे लिखते हैं-

"शाहजहाँ बादशाह के समकालीन विद्वान् कवि बनारसीदासजी के आत्मचरित्र 'अर्ध कथानक' से ज्ञात होता है कि साक्षात् दिगम्बर गुरु का दर्शन न होने के कारण वे अजानकारीवश विचित्र प्रवृत्ति में तत्पर थे। वे लिखते हैं कि चन्द्रभान, उदयकरण और थानसिंह नामक मित्रों के साथ अध्यात्म की चर्चा करते हुए एक कमरे में नग्न होकर फिरते थे और समझते थे कि हम निर्ग्रन्थ मुनिराज बन गये। यदि सकल संयमधारी दिगम्बर मुनि का दर्शन हुआ होता तो वे नग्नमुनि बनने का अद्भुत नाटक नहीं खेलते। मुनि पद में हिंसादि पापों का सार्वकालिक परित्याग होता है, यह बात उनकी समझ में आई होती तो वे कुछ समय दिगम्बर बन पश्चात् क्रीड़ा-कौतुक में कभी भी संलग्न न होते।"

"जब वास्तविक सत्य रूप का दर्शन नहीं होता तब मनुष्य काल्पनिक जगत् में भ्रमण करता हुआ उपहासपूर्ण प्रवृत्ति करता है। भूधरदासजी आदि प्राचीन हिन्दी के विद्वानों की रचनाओं के स्वाध्याय से यही बात झलकती है कि उन मुनि-भक्त नर रत्नों के नेत्र जिनमुद्रा धारी मुनि दर्शन के लिये सदा प्यासे ही रहे आये इसलिये वे अपनी रचना में चतुर्थकालीन वज्रवृषभसंहननधारी दिगम्बर गुरुओं की भक्ति करते हुए उनका ही इस काल में सद्भाव विचारा करते थे।

दिवाकर जी आगे लिखते हैं कि "उत्तर भारत में मुनि दर्शन होना असम्भव सरीखा समझा जाता था। इतना ही नहीं उच्च श्रावक का जीवन व्यतीत करने वाली आत्मायें भी दृष्टिगोचर नहीं होती थीं। उस समय चरित्र के समान ज्ञान की ज्योति भी अत्यंत क्षीण-सी दिखती थी। जो तत्त्वार्थसूत्र तथा भक्तामरस्तोत्र का मूल पाठ कर लेता था वह आज के प्रकाण्ड पंडितों से अधिक सम्मान और श्रद्धा का पात्र समझा जाता था। उस समय धार्मिकता के रस से भींगे अन्तःकरणवालों को भाईजी या भगतजी कहा जाता था। वे लोग सोचते थे कि आज का काल, व्रतादि, प्रतिमाओं का पूर्णतया पालन करने के भी प्रतिकूल है। इसलिये वे अपने पाप-भीरु मन द्वारा शास्त्रों से चुनी गयी बातों का अद्भुत संग्रह करके उसे जीवन का पथ-प्रदर्शक जानते थे।"

"उनमें अनेक बातें ऋषि-प्रणीत आगम से मेल नहीं खातीं। उदाहरणार्थ दौलतरामजी ने अपने 'क्रिया-कोष' में रात्रि-भक्त-त्याग नामक छठवीं प्रतिमा में गृहस्थ को रात्रि में मौन धारण करने का वर्णन कया है। उस पर "श्रावक धर्मसंग्रह" में धर्मात्मा श्रावक सोधिया दरयावसिंह जी लिखते हैं, "उसका भाव ऐसा भासता है कि भोजन, व्यापार आदि संबंधी विकथा न करे, धर्मचर्चा का निषेध नहीं।" (247 पृष्ठ) आगम के प्रकाश में यह बात अतिरेकपूर्ण है। छठवीं प्रतिमावाला स्वस्त्री सेवन द्वारा संतति तक उत्पन्न करता है, तब उसके विषय में रात्रि में मौन धारण करने का कथन आगम समर्थित नहीं है। दौलतरामजी के क्रिया-कोष में पाँचवीं प्रतिमा में सचित्त-भक्षण-त्याग के स्थान में सचित्त-मात्र का त्याग मानकर गृहस्थ को सचित्त मिट्टी का स्पर्श न करने को कहा है। उसे मुनितुल्य मान वे पंखा भी हिलाने की अनुमति नहीं देते। उन्होंने लिखा है -

माटी हाथ धोयवे काज,
लेय अचित्त दया के काज।।1871।।
पवन करे न करावे सोय,
षट काया को पीहर होय।।1874।।

"गृहस्थों में मूलाचार के समान पूज्य माने जाने वाले क्रिय-कोष में लिखा है कि छठवीं प्रतिमा में रात्रि के समय गमनागमन नहीं करे-

गमनागमन सकल आरंभ,
तजै रैन में नाँहि अचंभ ।।1882।।
छट्ठी प्रतिमाधारक सोई,
दिवस नारि को परसत होई ।।1048।।
रात्रि विषै अनशन व्रत धरै,
चउ अहार को है परिहरै।
गमनागमन तजै निसि माँहि,
मन वच तन दिन शील धराहिं ।।1049।।

"इस प्रकार आज से लगभग तीन-चार सौ वर्ष पूर्व का वातावरण तथा लोक धारणा को ध्यान में रखने पर मुनि जीवन की तो कथा ही निराली, प्रतिमाधारी श्रावक का पद कोई धारण कर सकेगा, यह अशक्य सोचा जाता था। यदि किसी ने सप्तम श्रावक के व्रत धारण कर लिए, तो उस धर्ममूर्ति का दर्शन ऐसा ही धार्मिक लोगों को हर्ष प्रदान करता था, जैसा कि पर्व काल में चारणादि ऋषिधारी मुनियों का दर्शन। ऐसे संयम के प्रति प्रोत्साहन-शून्य तथा कृत्रिम जटिलताओं के कंटकों से पूर्ण वातावरण में महाव्रती बनने की बात को सभी लोग असंभव सदृश सोचते थे। ऐसी स्थिति में गुरुभक्त गृहस्थ या तो विदेहभूमि में विराजमान साधु-समुदाय को परोक्ष प्रणामांजलि अर्पित करता था या अपनी मनोभूमि में प्राचीन काल में हुए साधुओं को विराजमान करके बड़े भाव से पूजता था। इस समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयम के प्रति भक्ति थी, ममता थी, किन्तु मन में भय का भाव भरा था, इससे संयम के पथ पर चलने की कल्पना भी कोई नहीं करता था।''

विषय-लंपटतापूर्ण वातावरण

''इस काल के पश्चात् नवीन वैज्ञानिक युग का आविर्भाव हुआ। इसने अपने संमोहन अस्त्रों, जलकल, वायुयान, रेल, मोटरों आदि के द्वारा लोगों को बहुत आश्चर्यप्रद इंद्रियपोषक सामग्री प्रदान की। लोग अधिक आमोद-प्रमोदप्रिय बन गए। अतः आचार-विचारों में अद्भुत शिथिलता का आविर्भाव हो गया। अब संयम का अनुराग भी नहीं दिखता है। संयमी को देखकर असंयमी समुदाय के मन में आदर का भाव नहीं जगता है। कारण उन असंयमी लोगों के आराध्य और वंदनीय लोग वे हैं, जो भोग, विषयलंपटता में सर्वोपरि बन रहे हैं। इससे आदर्श, सदाचार की बात चर्चा की वस्तु बन गई है। लोग यही कहने लगे हैं कि आचार में क्या धरा है? अपने विचार ठीक रखो यही सार की बात है। आज शिथिलाचार में अपरिमित वृद्धि होने के कारण कौन सोच सकता था कि ऐसी भी कोई युगान्तर उत्पन्न करने वाली आत्मा होगी जो इस पंचम काल में चतुर्थकालीन महामुनि की उच्च तपस्या की स्मृति को साक्षात् रूप में दर्शन करायेगी।

अविचलित शांति के सागर परीषहविजेता की कीर्ति का प्रसार

''पुद्गल के विकास का वैभव बताने वाले विज्ञान के चमत्कार पूर्ण इस युग में (सन् 1953 से) लगभग 50 वर्ष पूर्व एक समाचार प्रकाश में आया था कि अपने आध्यात्मिक पवित्र जीवन में भव्यात्माओं के अंतःकरण में अपरिमित आनन्द की वर्षा करने वाली एक विलक्षण आत्मा दक्षिण प्रान्त में दिगम्बर जैन मुनिराज के रूप में विराजमान है। उनकी तपस्या सब को चकित करती है। वे मुनिराज किसी जंगल की गुफा में आत्मध्यान कर रहे थे कि एक नागराज ने उन पर उपसर्ग किया। वह उनके शरीर में ऐसे लिपट गया था मानो वह सचमुच में संतापहारी, शान्तिदायी, सुवाससंपन्न चंदन का वृक्ष ही हो। वे मुनिराज सद्गुणों से अलंकृत थे। शान्ति के सागर थे। इससे उनकी आत्मा सर्पराज के लिपटने पर चंदन के समान अचल रही आयी। दो-तीन घंटे के बाद वह विषधर चला गया।''

''यह दृश्य काल्पनिक अथवा पौराणिक नहीं है। इसे अनेक गृहस्थों ने अपने चर्मचक्षुओं से देखा था। मृत्यु के अत्यन्त विश्वस्त प्रतिनिधि सर्पराज की अग्निपरीक्षा में पूर्णतया उत्तीर्ण होनेवाले अविचलित धर्मधारी उन शान्ति के सागर महामुनि की कीर्ति और महिमा साधर्मी समुदाय ने अवर्णनीय आनन्द, प्रेम, भक्ति तथा ममतापर्वक सुनी। लोग चकित हो उठे। प्रत्येक सहृदय इस भीषण पंचमकाल में चतुर्थकालीन दृश्य को नयनगोचर बनाने वाले उन तपोनिधि की मनोमंदिर में पूजा करने लगा।''

चित्रदर्शन

''जब उन निर्ग्रन्थ गुरुदेव का वीतरागतापूर्ण दिगम्बर मुद्रामय चित्र प्रकाश में आया, तब सभी मानव अपने धर्म या सम्प्रदाय का मोह भुला उन श्रमणराज को बड़ी ममता से प्रमाण करते थे। उनकी मुद्रा में अपार शांति थी। उनके रोम-रोम से वीतरागता का रस छलकता-सा लगता था। वे सर्वपरिग्रहमुक्त, पूर्णतया स्वावलम्बी बन परिग्रह के पीछे पागल बननेवाले जनसमुदाय को अमर जीवन और सच्चे कल्याण का पथ बताते थे कि वैभव के विलास में फँसनेवाली आत्मा अपने विनाश की सामग्री एकत्रित करती है। जिसे अविनाशी आनन्द चाहिए, उसे अपरिग्रहवाद के प्रकाश में अपने अन्तःकरण को धोना चाहिए। उनका जीवन अहिंसामय था।

मुनिराज के चित्र का प्रभाव

''एक बार हमारे यहाँ उनके चित्र का दर्शन अनेक हिन्दू, मुस्लिम, पारसी आदि साक्षरों ने किया, तो उनकी आत्मा आश्चर्ययुक्त हो आनन्दविभोर हो गई। सहृदय मुसलिम जागीरदार कह उठे, 'धन्य है ऐसी आत्मा को।' उनके दिगम्बरत्व पर उन्होंने एक पद्य सुनाया-

तन की उरयानी से बेहतर है नहीं कोई लिबास।
यह वह जामा है कि जिसका नहीं उल्टा सीधा।।

'दिगम्बरत्व से बढ़कर और दूसरा कोई भी वेष नहीं है। यह वह पोशाक है, जिसमें सीधे या उल्टे का भेदभाव नहीं है।

एक दूसरे तत्वप्रेमी भाई बोल उठे कि श्रेष्ठ और उच्च जीवन तो इन महात्मा का है, जिन्होंने अपनी इंद्रियों को जीता है। जिन्होंने व्याघ्र, सर्प आदि भीषण जन्तुओं को मारा है, उन्होंने कोई बड़ा काम नहीं किया। सबसे बड़ा शैतान इन्द्रियों की लालसा है। जिसने इंद्रियों पर विजय प्राप्त की है, यथार्थ में वही व्यक्ति महान है। उससे बड़ा और कौन हो सकता है? पारे को मारकर सिद्ध रसायन बनाने वाले ने क्या बड़ा काम किया! यथार्थ में अपने अहंकार को जिसने मारा वही आत्मा श्रेष्ठ है।''

ऋषिराज का दर्शन

''कुछ वर्षों के पश्चात् उन ऋषिराज का साक्षात् दर्शन मिला, तब ज्ञात हुआ कि उनका असाधारण व्यक्तित्व पूर्णतया उनके निकट संपर्क में आने से ही समझा जा सकता है। उनकी समस्त क्रियाओं को देखकर प्रत्येक विवेकी विद्वान् यह अनुभव करता था कि वे इस पंचमकाल में चतुर्थ-कालीन मुनियों के समान निर्दोष आचरण करते थे। वे ही चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज के नाम से श्रमण संघ के शिरोमणि के रूप में विख्यात थे।''(चारित्रचक्रवर्ती पृ.1-7)

बीसवीं सदी के इन विश्वविश्रुत प्रथम आचार्य की जीवनयात्रा का संक्षिप्त दृश्य पूज्य मुनि श्री क्षमसागर जी ने 'श्रद्धा' नामक लघु पुस्तिका में उतारा है, साथ ही उनके उपदेशांशों (वचनामृत) का भी संग्रह किया है। इस महान व्यक्तित्व के गुणों की अष्टद्रव्यात्मक पूजा पूज्य मुनि योगसागर जी द्वारा रची गई है। यह सामग्री उनके समाधिदिवस के सन्दर्भ में 'जिनभाषित' में प्रस्तुत की जा रही है।

अत्यधिक व्यस्तता के कारण जुलाई 2001 का अंक समय पर प्रकाशित करना हमारे लिये संभव नहीं हो पाया। इसलिये जुलाई और अगस्त दोनों महीनों का संयुक्तांक प्रकाशित करने के लिये बाध्य हुए हैं। इसके लिये कुछ पृष्ठों की वृद्धि भी की गई है। पाठक क्षमा करेंगे।

रतनचन्द्र जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेख

आचार्यश्री शान्तिसागर : जीवन यात्रा एवं वचनामृत

मुनि श्री क्षमासागर

जीवन यात्रा

कर्नाटक प्रान्त के बेलगाम जिले में येलगुल नाम का एक गाँव है। आपका जन्म इसी येलगुल ग्राम में अपने नानाजी के घर में हुआ। आपका बचपन का नाम सत्यगौड़ा था। आपके पिता श्री भीमगौड़ा और माता श्री सत्यवती भोजग्राम के अत्यन्त प्रभावशाली और वैभववान सद्गृहस्थ थे। घर-गृहस्थी में रहकर भी आपके पिता का अधिकांश समय संयमपूर्वक व्यतीत हुआ और अंत समय में उन्होंने सल्लेखनापूर्वक अपनी देह का परित्याग किया। आपकी माता अत्यंत गुणवती थीं। व्रत-नियम-संयम का पालन करने में सदा तत्पर रहती थीं। आपके गर्भ में आते ही माता को एक हजार आठ कमलों के द्वारा भगवान जिनेन्द्र की पूजा करने का शुभ-भाव हुआ। तब कोल्हापुर के समीप राज्यसंरक्षित सरोवर में से कमल मँगवाए गए और माता ने अत्यन्त भक्ति-भाव से जिनेन्द्र भगवान की पूजा की। इस तरह एक संस्कारवान धर्मनिष्ठ परिवार में आप जैसी भव्यात्मा ने जन्म लेकर सभी का जीवन कृतार्थ कर दिया।

आपका विवाह नौ वर्ष की उम्र में एक सात वर्षीय कन्या के साथ कर दिया गया था। विवाह के छह माह बाद ही उस कन्या का देहावसान हो गया। आपके माता-पिता ने पुनः विवाह करने का आग्रह किया पर आपने विवाह करने से इंकार कर दिया और सिद्धिसागर मुनिराज के समक्ष आजन्म-ब्रह्मचर्य-व्रत धारण कर लिया।

आप असाधारण शक्ति के धारक थे। एक बार आप भोज ग्राम में पधारे मुनिराज को अपने कंधे पर बिठाकर वेदगंगा और दूधगंगा नाम की नदियों को सहज ही पार कर गए थे। कर्त्तव्य मानकर घर गृहस्थी के कार्य करते हुए भी आप निःस्पृही रहे। सैंतीस वर्ष की उम्र में पिता का देहावसान होते ही घर में रहकर भी आपने एक उपवास और एक दिन आहार करने का नियम ले लिया था।

एक दिन कर्नाटक-प्रान्त के उत्तूर ग्राम में देवेन्द्रकीर्ति (देवप्पा-स्वामी) नामक दिगम्बर मुनिराज के चरणों में जाकर आपने निर्ग्रन्थ-दीक्षा अंगीकार करने की भावना व्यक्त की। मुनिराज देवप्पा स्वामी भोजग्राम में जब कभी एक-एक माह तक रहे आते थे, इसलिये आपकी धार्मिक-आस्था और दृढ़ता से परिचित थे। उन्होंने आपको पहले क्षुल्लक का व्रत ग्रहण करने की आज्ञा दी। गुरु आज्ञा से आपने सहर्ष क्षुल्लक-दीक्षा ग्रहण की। आपका नाम शान्तिसागर रखा गया।

एक बार श्रावकों का संघ सिद्धक्षेत्र गिरिनारजी की यात्रा के लिये जा रहा था। श्रावकों के निवेदन को स्वीकार करके आप भी सभी के साथ गिरिनार-यात्रा को गए। गिरिनार पर्वत पर पहुँचकर भगवान नेमिनाथ के चरण-चिन्हों को नमस्कार करके आपने अत्यंत वैराग्य-युक्त होकर मात्र कौपीन को रखकर शेष सब वस्त्रों का परित्याग कर दिया और एलक पद अंगीकार किया।

गिरिनार-यात्रा से लौटने के उपरान्त आपने यरनाल-ग्राम में होने वाले पंच-कल्याणक के अवसर पर अपने दीक्षागुरु मुनिराज देवप्पा-स्वामी से मुनिदीक्षा ग्रहण कर ली। इसके चार वर्ष बाद समडोली में आपने श्री वीरसागरजी एवं श्री नेमीसागर जी को मुनि दीक्षा दी और आचार्य-पद से अलंकृत हुए। गजपंथा में पंचकल्याणक के शुभ-अवसर पर आपको चारित्र्यचक्रवर्ती पद से विभूषित किया गया। आपके दीक्षागुरु मुनिराज देवप्पा स्वामी ने आपकी शास्त्रानुकूल निर्दोष मुनिचर्या देखकर आपसे पुनः मुनिदीक्षा ग्रहण की इसलिए आप गुरूणां गुरु कहलाए।

आपने अपने चौरासी वर्ष के जीवन काल में सत्तावन वर्ष अन्न का त्याग किया और छत्तीस वर्ष के मुनि जीवन में पच्चीस वर्ष नौ माह उपवास किए। मुनि जीवन में आप उपसर्ग और परीषह-जय के समय अत्यन्त दृढ़ और स्थिर रहे। समतापूर्वक सहजता से सब सहन किया और सदा तपस्या में लीन रहे।

अनेक नगरों में विहार करके आपने लोक-कल्याण के कार्य किए। अनेक तीर्थों की वन्दना की और अंत में नेत्रज्योति क्षीण होती जानकर कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र पर छत्तीस दिन तक सल्लेखना धारण करके समतापूर्वक देह का परित्याग किया।

कठोर तपस्या, निःस्पृह साधना और अद्भुत आत्मनिष्ठा के बल पर आपने पूरे देश में दिगम्बर जैन मुनि की उज्ज्वल कीर्ति स्थापित की और विलुप्तप्राय दिगम्बर गुरु परम्परा को पुनर्जीवित करके जैनशासन की महती प्रभावना की।

वचनामृत

●

हिंसा आदि पापों का त्याग करना धर्म है. इसके बिना विश्व में कभी शान्ति नहीं हो सकती। अहिंसा-धर्म का लोप होने पर सुख और आनंद का लोप हो जाएगा। धर्म का आधार सब जीवों पर दया करना है।

●

इस अहिंसा धर्म ने हमें अवर्णनीय निराकुलता दी है। इससे हमें बड़ी शान्ति मिली है। बाह्य-परिग्रह आदि से सुख पाने की इच्छा करना भ्रम है। त्याग में ही सच्चा आनंद मिलता है। उपवास आदि हमें इसलिये करते हैं कि पूर्व में बाँधे गए कर्मों की निर्जरा हो जाए। अग्नि के ताप के बना जैसे सुवर्ण शुद्ध नहीं होता उसी प्रकार तपश्चरण के बिना संचित कर्मों का नाश नहीं होता। अतः हम कर्मों की निर्जरा के लिय कायक्लेश आदि तप करते हैं। इससे हमें दुख नहीं होता। हमें बड़ा सुख और शांति मिलती है।

●

परिग्रह के द्वारा मन में चंचलता, राग, द्वेष आदि विकार उत्पन्न होते हैं, जैसे पवन के बहते रहने से दीपशिखा कंपनरहित नहीं हो सकती है। पवन के आघात से समुद्र में लहरों की परम्परा उठती जाती है। पवन के शान्त होते ही दीपक की लौ स्थिर हो जाती है। समुद्र प्रशान्त होजाता है। उसी प्रकार राग-द्वेष के कारणभूत धन, वैभव, कुटुम्ब आदि परिग्रह को छोड़ देने पर मन में चंचलता नहीं रहती है। परिग्रह रहित निर्मल जीवन जीने से मानसिक शान्ति मिलती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

●

जैन धर्म कहता है कि प्रत्येक आत्मा महावीर भगवान् के समान परमात्मा बन सकता है। संयमी बनकर स्वावलम्बी जीवन जीते हुए प्रत्येक संसारी जीव निर्वाण को प्राप्त कर सकता है।

●

अकेले सम्यक्त्व के होते हुए भी जीव मोक्ष नहीं पाता है। ज्ञानकी स्थिति निराली है। वह तो गंगा गए गंगादास, जमुना गए जमुनादास के समान श्रद्धा के अनुसार अपना रंग बदलता है। वह ज्ञान सम्यक् श्रद्धा सहित सम्यग्ज्ञान हो जाता है और इसके अभाव में वही ज्ञान मिथ्या हो जाता है। इसलिये ज्ञान का भी मूल्य नहीं है। मूल्य है सम्यक्-चरित्र का। सम्यक् चरित्र होने पर नियम से मोक्ष होता है।

●

धर्म का पालन कठिन है। यह ठीक है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि धर्म को बिल्कुल भुला दिया जाए। अगर पूर्ण रूप से उसका पालन नहीं होता है तो जितनी शक्ति है उतना पालन करो और जितना पालन करते हो उसे अच्छी तरह पालो। अकर्मण्य बनकर चुपचाप बैठना ठीक नहीं है और न स्वच्छंद बनने में ही भलाई है। शक्ति को न छुपाकर धर्म का पालन करना प्रत्येक समझदार व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

●

हम व्यवहार धर्म का पालन करते हैं। भगवान का दर्शन करते हैं। अभिषेक देखते हैं। प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करते हैं। सभी क्रियाओं का यथाविधि पालन करते हैं, किन्तु हमारी अंतरंग श्रद्धा निश्चय पर है। जिस समय जो भवितव्य है उसे कोई भी अन्यथा नहीं परिणमा सकेगा, किन्तु हमारा निश्चय का एकान्त नहीं है। दूसरों के दुःख दूर करने का विचार करुणावश होता है।

●

धर्म पर अविचल श्रद्धा धारण करो। स्वाध्याय करो। यह स्वाध्याय परम तप है। शास्त्र के अभ्यास से आत्मा का कल्याण होता है। गरीब लोग शास्त्र नहीं खरीद सकते। उनको शास्त्र का दान करो। शास्त्रदान में महान पुण्य है। जिनेन्द्र भगवान की वाणी के द्वारा सम्यग्दर्शन का लाभ होता है।

●

आत्मा का चिंतन करो। आत्मचिंतन द्वारा सम्यग्दर्शन होता है। सम्यक्त्व होने पर दर्शनमोह का अभाव होते हुए भी चरित्र मोहनीय कर्म बैठा रहता है। उसका क्षय करने के लिये संयम को धारण करना आवश्यक है। संयम से चारित्रमोहनीय कर्म नष्ट होगा। इस प्रकार सम्पूर्ण मोह के क्षय होने से अर्हन्तस्वरूप की प्राप्ति होती है।

●

अरे! क्या देखते हो? व्रत पालोगे, तो स्वर्ग में तुम हमारे साथी रहोगे। वहाँ भी मिलते रहोगे। हमें वहाँ अच्छा साथी चाहिए। देखो, अभी हम तुमको आग्रह करते हैं। स्मरण रखो, आगे फिर शान्तिसागर तुमको कहने नहीं आनेवाला है। स्वर्ग में जाकर वहाँ से विदेह में पहुँचकर सीमंधर स्वामी के प्रत्यक्ष दर्शन कर सकोगे। उनकी दिव्य ध्वनि सुन सकोगे। नंदीश्वर आदि के अकृत्रिम जिनबिम्बों के दर्शन कर सकोगे। इससे तुमको सम्यक्त्व मिल जाएगा। वहाँ से विदेह में उत्पन्न होकर मोक्ष जा सकोगे। सोचो। एक बार फिर से सोचो। संयम धारण करो।

वर्षायोग-प्रतिष्ठापन

आचार्य श्री विद्यासागर जी

जबलपुर, 5 जुलाई। तिलवारा स्थित दयोदय जीव संरक्षण एवं प्रायवरण केन्द्र गोशाला में आज उत्सव-सा माहौल था। हर श्रद्धालु का चेहरा खिला-खिला नजर आ रहा था। मंत्रों के स्वर हवा में घुल रहे थे। खचाखच भीड़ में हर निगाह मंचासीन आचार्य विद्यासागर जी व मुनिसंघ को निहार रही थी। यहाँ आज आचार्यश्री ने अपने संघ सहित वर्षावास योग (चातुर्मास) धारण किया।

चातुर्मास प्रारंभ होने के पूर्व महाराज श्री के सान्निध्य में प्रातः 9 बजे गोशाला में जिनालय की स्थापना हुई। कलश स्थापना का सौभाग्य इंदौर निवासी अर्पित कुमार, निर्मल कुमार पाटोदी को प्राप्त हुआ। स्वास्थ्य कलश राजेश जैन, जीव रक्षा कलश कमलेश जैन कक्का ने स्थापित किया। इसी क्रम में कैलाश चन्द्र जैन चावल ने आचार्यश्री को शास्त्र प्रदान किए। उदयचंद वीरेन्द्र कुमार एवं सुंदरलाल जैन ने आचार्य ज्ञानसागर जी एवं कुंडलपुर के बड़े बाबा के चित्र का अनावरण किया। दीप प्रज्वलन महेन्द्र कुमार, अरविन्द कुमार, राजकुमार एवं अशोक कुमार जैन द्वारा किया गया। आरती कमल अग्रवाल एवं अरुणा अग्रवाल के संयोजन में हुई। आचार्यश्री के पिसनहारी मढ़िया से दयोदय गोशाला पहुँचने के पूर्व ही यहाँ भक्तों का जमावड़ा लग गया।

चातुर्मास स्थापना के बाद आचार्यश्री ने अपने उद्बोधन में कहा कि जहाँ अहिंसा नहीं है वह तीर्थ हो ही नहीं सकता। उन्होंने कहा कि दया मनुष्य का आभूषण है और मोह दया के लिए व्यवधान है। मोह से बचने के साथ धर्मकार्यों में मुक्तहस्त से दान करना चाहिए। उन्होंने दयोदय गशाला को पशुसेवा के लिये एक माध्यम निरूपित करते हुए सभी से प्राणियों पर दया करने का आग्रह किया। आचार्यश्री ने कहा कि नर्मदा के पावन तट पर बनी यह गोशाला भी सेवाभाव से पवित्र हो जाएगी। आचार्यश्री ने कहा कि मैं भेड़ाघाट से सीधे चातुर्मास हेतु दयोदय गोशाला आ सकता था लेकिन पिसनहारी की मढ़िया में इसलिये रुका कि क्षेत्रपाल संतुष्ट हो जाएँ।

आचार्यश्री ने मध्यप्रदेश शासन द्वारा जैन संप्रदाय को अल्पसंख्यक घोषित करने की पहल पर पात्रजनों से उसका समुचित लाभ लेने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि विशेषकर शिक्षा के क्षेत्र में इस सुविधा का सदुपयोग होना चाहिए।

स्वप्निल सपन जैन, बाकल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य श्री शान्तिसागर जी की पूजा

मुनि श्री योगसागर

(वसन्ततिलका छन्द)

हे राग-द्वेष मद मोह विषापहारी,
अन्वर्थ नाम तव अद्भुत कार्यकारी।
आनन्द पंकज विकासक भानुरूप,
श्री शान्तिसागर गुरु शिव के स्वरूप॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य शान्तिसागरजीमुनीन्द्र अत्र अवतर-अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य शान्तिसागरजीमुनीन्द्र अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री आचार्य शान्तिसागरजीमुनीन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

आचार्य देव भवसागर से तिरा दो,
या जन्म मृत्यु अघ को जड़ से मिटा दो।
हे वीर काल यम को वश में किया है,
आश्चर्य क्या सहज है न विलम्बता है॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संतप्तमान मम जीवन है सदा से,
कोई न शीतल पदार्थ मिला कहीं से।
जो आपके चरण-पंकज धूल से मैं,
पाया अपूर्व वर शान्ति सुधा सदा मैं॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगोपभोग तज के जिनलिंग धारे,
वैराग्य दुर्द्धर लिया भव को निवारे।
शुद्धोपयोग परमोत्तम ध्यान द्वारा,
आत्मीय अक्षय निजातम पेय प्यारा॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

काला भुजंग सम काम डसा हुआ है,
ऐसा प्रभाव सब मूर्च्छित विश्व ही है।
जो सर्व संग तज संयम को वरा है,
ब्रह्मात्म में सहज ही रमते सदा हैं।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अध्यात्म के रसिक हैं समता जगी है,
जो भूख प्यास जिनको न सता रही है।
पकवान जो सरस थाल चढ़ा रहा हूँ,
मेरी क्षुधा विलय हो निज को निहारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्वदीप यह ज्ञात करा रहा है,
तेरी अनादि अविवेक विलीनता है।
अज्ञाननाशक गुरो तुमको मिले हैं,
ऐसी घड़ी सुलभ ही मिलती नहीं है॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्यों धूप गन्धमय पावक में जलाते,
त्यों आप कर्म अघ को तप से जलाते।
हे अन्तरंग बहिरंग प्रशान्त मूर्ति,
हो धर्म में मम सदा समकीत स्फूर्ति॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार में फल अनेक हमें दिखाते,
ये राग-द्वेषद्वय संसृति में भ्रमाते।
त्रैलोक्य में विदित है फल मोक्ष सच्चा,
ओ प्राप्त हो मम गुरो सुखधाम अच्छा॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य-शान्तिसागरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रद्धा समेत तव पूजन जो करेगा,
मानो अनन्त भव के अघ को हरेगा।
पावित्र्य मंगलमयी वसु द्रव्य लेके,
पूजो सभी परिविशुद्ध सुभाव ले के,

ॐ ह्रीं श्री आचार्यशान्तिसागरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा महासन्त की साधना, लोकोत्तर विख्यात।
जिनके नाम स्मरण से, जीवन बने प्रभात॥

जयमाला

नाना प्रकार तप दुर्द्धर धारते थे,
वे धैर्यवन्त उपसर्ग-जयी बने थे।
आये अनेक पथ जीवन में प्रसंग,
तो भी कभी न डिगती समता अभंग॥1॥
या पुण्य सातिशय कारक सन्त जी में,
सौगन्ध पुष्प समकीर्ति चहुँ दिशी में।
रक्षाकरी श्रमण संघ परम्परा की,
निर्ग्रन्थ पंथ जय घोषित है सदा ही॥2॥
सौभाग्य है उदय पंचम काल में भी,
चर्या रही सतयुगी बलहीन में भी।
थी सिंहवृत्ति मुनिजीवन में सदा ही,
शैथिल्य का न लवलेश दिखे कहीं भी॥3॥
निर्द्वन्द्व निःस्पृह विरक्त निजात्मवेत्ता,
चारित्र-चक्र परमोत्तम कर्म-भेत्ता।
त्रैरत्न उज्जवल प्रभा मुख पै दिखाती,
भक्तात्म के तिमिर को उर की मिटाती॥4॥
तेरी कृपा वरदहस्त परोपकारी,
जो नाम के स्मरण संकट को निवारी।
अर्चा करो स्तवन वन्दन कीर्ति गाओ,
जो पादपद्म-द्वय को उर में बिठाओ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य-शान्तिसागरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं। निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा महाविषम कलिकाय में, गुरु तो सुरतरु जान।
जिनके पाद सरोज में, बनते सभी महान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोक्षमार्गी के लिए चिन्ता नहीं, चिन्तन आवश्यक

आचार्य श्री विद्यासागर

कोनी जी में 25 जून 2001 को आचार्यश्री का 34वाँ मुनिदीक्षादिवस मनाया गया। उस अवसर पर आचार्यश्री द्वारा दिया गया प्रवचन।

मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हुए मोक्षमार्गी के लिये चिन्ता नहीं, चिन्तन की आवश्यकता होती है। संसारमार्ग मोक्षमार्ग से विपरीत होता है। संसार मार्ग में चिन्ता की मुख्यता होती है। मुमुक्षु तो अपने हित के बारे में सोचता है, चिन्तन करता है। दीक्षित होने का अर्थ है संकल्पबद्ध होना। आज गुरुदेव ने हम पर वह उपकार किया। गुरुमहाराज ने जो संकेत दिये हैं, दिशाबोध हमारे लिये दिए उनके अनुसार आज चल रहा हूँ। उनकी असीम कृपा से हमारे मोह का भार उतर गया, इसका मैं आभार मानता हूँ। मैं सदा सोचता हूँ कहीं वह दुबारा न चढ़ जाये। मैं इतने बड़े संघ का भार कैसे धारण करूँगा? यह बात मैंने उनके समक्ष कही थी, तो उन्होंने कहा था - अपना शरीर कभी भार नहीं होता है, यदि शरीर स्वस्थ और नीरोग है तो वह शरीर कितना भी बड़ा हो सहज रूप में सब कुछ होता रहता है। लेकिन शरीर भले ही दुबला पतला है, यदि अस्वस्थ रहता है उसे भी चलने में तकलीफ होती है, भारमय दिखता है। बस उनका संकेत समझ गया उसी के सहारे चल रहा हूँ। संसार मार्ग में ऐसा ही होता है, जब अन्य पदार्थ को उठाते हैं तो भारमय अनुभव होता है, लेकिन जब एकदम अकेले हो जाता है तो भार रहित व्यक्ति हो जाता है। यह सब गुरुदेव की कृपा एवं आशीष है, जो इतने बड़े संघ का निर्वाह सहज रूप से हो रहा है।

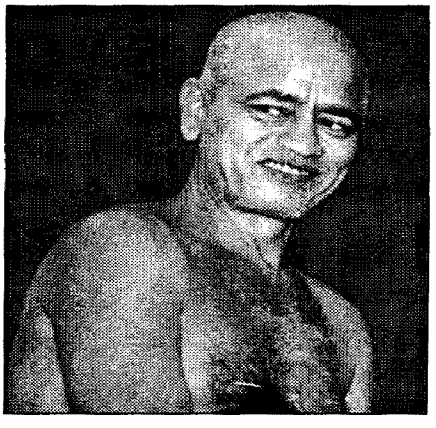

एक लेखक होता है, वह लिखता है। वह उस ओर नहीं देखता कि इतना सारा लिख लिया, वह तो यह सोचता है कि अभी कितना और लिखना है। अपने लक्ष्य की ओर उसकी दृष्टि रहती है। समय के अनुसार हमें आगे बढ़ना है, आगे बढ़ने में बाधा नहीं आये उस ओर दृष्टि रखना है, अपना रास्ता प्रशस्त करते जाना है। जैसे नदी कभी नहीं सोचती कि आगे पहाड़ है, अब कैसे होगा? वह तो आगे बढ़ती जाती है, और उस पहाड़ को काटकर आगे बढ़ जाती है। वह नदी अपने निर्धारित लक्ष्य को कभी नहीं भूलती और चली जाती है। वैसे ही हमें महाराज (आ.श्री ज्ञानसागरजी) ने कुछ ऐसी युक्तियाँ दीं, उनके माध्यम से ये भार क्या, इससे बड़ा भार भी उठा सकते हैं। जैसे गाँव के बाहर जो चुंगी नाका होता है, जो बहुत भारी है, लेकिन युक्ति के साथ उसे लगाया जाता है, जैसे ही कोई वाहन आता है, एक दुबला-पतला आदमी भी उसे नीचे झुका देता है। वाहन रुक जाता है, टेक्स देने पर ऊपर उठा देता है। ऐसा ही युक्तियों का वरद हस्तभरा आशीष हमें मिला है। वरदहस्त का अर्थ ये नहीं कि उनके हाथ के नीचे बैठो रहो। उन्होंने जैसा कहा वैसा करता गया। वे (आ. श्री ज्ञानसागरजी) ज्यादा बोलते नहीं थे, कम बोलते, लेकिन नपातुला सारभूत बोला करते थे।उनका प्रत्येक संकेत अनुभूतिपरक हुआ करता था। उनके संकेत को अनुभूति का विषय बनाकर इतने बड़े भार को उठा लिया है।

एक बार महाराज ने सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ का स्वाध्याय कराते समय कहा था - पाँचवें अध्याय के परस्परोप ग्रहोजीवानाम् को समझाते हुए कहा था- परस्पर में एक दूसरे के उपकार की बात को भी नहीं भूलना चाहिए। जैसे मुनीम पर मालिक का बड़ा उपकार रहता है, वैसे ही मालिक पर मुनीम का भी उपकार, मालिक के अनुसार काम करने से होता है। वैसे गुरु का उपकार शिष्य के ऊपर तो है ही लेकिन शिष्य का गुरु के ऊपर कैसे उपकार होता है? तो कहा था- गुरु की आज्ञा, आगम की आज्ञा के अनुसार चलना भी सबसे बड़ा उपकार है। यह बात हमें संकेत के रूप में उस समय मिली थी। और कहा था अपने आपको नहीं भूलना-

कोऽहं कीदृग्गुणःक्वत्यः किम्प्राप्यः किन्निमित्तकः।
इत्यूहः प्रत्यहं नोचेदस्थाने हि मतिर्भवेत्।।
(क्षत्रचूडामणि)

मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? इसको भूलना नहीं। कहाँ से आये हैं, और किसलिये आये, इसको भूलना नहीं है। हम आज इन महाराजों (मुनिगणों को संकेत करते हुए) से कहना चाहते हैं- आपने जो माँगा था, हमने दे दिया, अब इसे भूलना नहीं है। अब भीतरी श्रामण्य का क्या स्वरूप है? उसको समझना है। यह वह दुकान है जिससे इधर-उधर की चीजों का व्यापार नहीं किया जाता है। शुद्धोपयोगरूपी हीरे जवाहारात का व्यापार किया जाता है। करोड़पति कौन बनता है? ज्वार, बाजरा बेचने वाला नहीं बनता, हीरे जवाहारात का व्यापार करने वाला बन सकता है। श्रमणों के लए हीरे जवाहारातरूपी शुद्धोपयोग का व्यापार करना चाहिए। आत्मानुभूति हीरे-मोती की बात है। ऐसी दुकान से इधर-उधर की बात नहीं होना चाहिए। इसके लिये विज्ञापन आदि देकर प्रचार आदि करने की, अनाज आदि की तरह नमूना दिखाने की जरूरत नहीं होती है। बहुत लोग दिन काटने में लगे हैं। दिन नहीं कर्म काटने की बात करना है। इस मार्ग में सिंहवृत्ति के साथ चला जाता है। श्वानवृत्ति से इस मार्ग पर नहीं चला जाता है। जैसे श्वान को कोई लाठी मारता है तो वह लाठी को काटता है, लेकिन सिंह को कोई मारता है तो सिंह मारने वाले के ऊपर प्रहार करता है। हमें निमित्त के ऊपर नहीं कर्मों के ऊपर प्रहार करना है। अपने कर्मों को चूर-चूर करना है। हम अपने परिणामों को देखेंगे तो कर्म चूर-चूर कर सकते हैं।

महाराज जी (आ. श्री ज्ञानसागरजी) की वृत्ति इतनी वृद्धावस्था में एकदम शान्त एवं आत्मानुभूति से जुड़ी हुई थी। प्रत्येक चर्चा में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जागृति रहती थी। हम उनके पास जाते थे, उनके पास रहते-रहते हमारी भी वैसी ही शान्त वृत्ति हो जाती थी। आचार्य कुन्दकुन्द, अकलंक देव आदि का परिचय हमें उनसे मिलता रहता था। वीतरागता उनकी दृष्टि में बनी रहती थी। ऐसे वीतरागी गुरुओं के चरणों के अनुसार चलते चले जायें तो हमारी वृत्ति शान्त बन जाती है। महाराज ने कहा था - अपने आपको लघु भी समझो और गुरु भी समझो, अपने आपको देखने की बात को याद रखो। जब हम दूसरे को देखते हैं तो अपने आपको लघु समझो। चार बातें कुन्दकुन्द महाराज ने मोक्षमार्गी को याद रखने के लिये कही हैं-

उवयरणं जिणमग्गे, लिंगं जहजादरुवमिदि भणिदं।
गुरुवयणं विय विणओ, सुत्तज्झणं च णिद्दिट्ठं।।
प्रवचनसार गा.225।।

यथाजात रूप लिंग, जिनमार्ग में उपकरण कहा गया है। गुरु के वचन, सूत्रों का अध्ययन और विनय भी उपकरण कहे गये हैं। अपने गुरुमहाराज ने हमें इन्हें याद रखने को कहा। गुरुमहाराज (ज्ञानसागरजी) की काया का हमारे बीच से अभाव हो सकता है, लेकिन उनके दिये गये सूत्र तो आज भी हमारे पास हैं। ये गुरुमंत्र रूप संकेत हैं, उनके सहारे ही आज हम चल रहे हैं। जैसे बेटरी को चार्ज करा देते हैं, तो वह काम करने लगती है, प्रकाश मिलने लगता है वैसे ही गुरुओं के वाक्य याद करने से हमें सही दिशाबोधरूपी प्रकाश मिल जाता है।

काल कभी जाता नहीं है, वह तो सदा रहता है। आने-जाने का काम तो लगा रहता है, यह सब काल का परिणमन है। उसको जानना है, पहचानना है। काल को पहचानने की आवश्यकता नहीं है। जब हम अजर-अमर हैं तो हमें काल को जानने की आवश्यकता नहीं है, उसमें जो परिणमन हो रहा है उसको जानकर अपने आपको जानने की आवश्यकता है। साधुत्व के साथ जो निजानुभव की अनुभूति है वह आचार्य, उपाध्याय पद के साथ नहीं होती। दिगम्बरत्व की अपेक्षा से तीनों एक हैं, वीतरागता तीनों के पास है। व्यापक रूप में यदि है तो साधु ही होता है। अरहन्त परमेष्ठी जो हैं वे भी अपने सारे समवशरण आदि के वैभव को छोड़कर साधुत्व को स्वीकार करके मुक्तिश्री को प्राप्त करते हैं। यानि जीवन का उपसंहार इस साधुत्व के साथ ही हुआ करता है। हम अपना दीक्षा दिवस क्यों मनायें? ये तो आप लोग इस प्रकार के समारोह करके मना रहे हैं। मैं तो सोच रहा था- आज मुझे बोलना नहीं पड़ेगा। मैं तो अपने अनुसार दीक्षा दिवस मनाता।

दीक्षा दिवस का अर्थ संकल्पदिवस है। इस दिवस के माध्यम से अपने आपके संकल्प को दृढ़ बनाया जाता है। इसके लिये ही दीक्षादिवस मनाया जाता है। हम इस प्रकार दिवसों के माध्यम से समता की साधना को बढ़ाते जायें। समता के अभाव में श्रमण अपने आपको भूल जाता है। समता तो श्रमण का भूषण है। सम्मान, अपमान को भूलकर अपने आपको जानना श्रमण का लक्षण है। इसलिये कुन्दकुन्द महाराज ने प्रवचनसार चूलिका अधिकार में लिखा है-

समसत्तुबंधुवग्गो, समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो।
समलोट्ठुकंचणो पुण जीविदमरणे समो समणो।।249।।

अर्थात् जो शत्रु और बन्धु वर्ग को समान दृष्टि से देखता है, सुख और दुख में समान भाव रखता है, प्रशंसा और निन्दा में समता भाव रखता है, और पत्थर और स्वर्ण को समान दृष्टि से देखता है, और जीवन मरण के प्रति जिसको समता है वह श्रमण है। आप लोगों को समय को याद रखना है, उसका सदुपयोग करना चाहिए। इन तिथियों के माध्यम से अपने आपका भान होता रहे कि मैं साधु हूँ। अपने आपका अनुभव करते जायें। णमो लोए सव्वसाहूणं...॥

प्रस्तुति : मुनि श्री अजितसागर

वर्षायोग-प्रतिष्ठापन

उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी

मेरठ। 4.7.2001 को दोपहर में सराकोद्धारक परम पूज्य उपाध्याय 108 श्री ज्ञान सागर जी महाराज, मुनि श्री वैराग्य सागरजी महाराज एवं क्षु. श्री सम्यक्त्व सागर जी महाराज के वर्षायोग का स्थापना समारोह का शुभारम्भ श्रीमती सपना जैन के मंगलाचरण से हुआ। गुरुभक्ति का दीप प्रज्वलित करते हुए इसी कड़ी में श्रीमती पूनम जी एवं बहिन मोनिका जी ने भजन प्रस्तुत कर सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। ब्र.जय कुमार निशान्त (टीकमगढ़) ने वर्षायोग का महत्त्व बताते हुए कहा कि वर्षायोग की पावन बेला अध्यात्म की यात्रा कराने में, अन्धकार से प्रकाश की ओर आने में माध्यम बनती है। साधु सन्तों के समागम से जीने की कला आ जाती है। पश्चात् ध्वजारोहण, दीप प्रज्वलन, शास्त्रभेंट, आरती तथा मंगल कलश की बोलियों का कार्य सम्पन्न हुआ। श्री सुनील शास्त्री ने ज्ञान की महिमा बताते हुए कहा कि परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद तथा सराकोद्धारक परम पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञान सागर जी महाराज की प्रेरणा से जम्बू स्वामी निर्वाण स्थली चौरासी मथुरा की पावन धरा पर जैन धर्म की शिक्षा के लिए श्रमण ज्ञान भारती संस्था की स्थापना की गयी है जिसका शुभ आरम्भ 11 जुलाई 2001 को होने जा रहा है। उसमें 15 विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जायेगा।

परम पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी महाराज ने कहा कि वर्षायोग का समय हम सभी को परपदार्थों से दृष्टि मोड़कर अपने आपसे दृष्टि जोड़ने में माध्यम बनता है। वर्षाऋतु के दिनों में चारों ओर हरियाली छा जाती है। जीव राशि की बहुलता हो जाती है। ऐसे समय साधु-सन्त चार माह एक स्थान पर रहकर आत्म-साधना करते हैं, श्रावकों का भी सीजन मन्दा रहता है, इस कारण श्रावक भी साधु सन्तों के द्वारा धर्म का लाभ लेते हैं। आप सभी वर्षायोग की बेला में संगठित उत्साहित होकर कार्य करें, कार्यकर्ताओं को इस बेला में समता का परिचय देकर मेरठ महानगर के गौरव को महान बनाये रखना है। आने वाला प्रत्येक अतिथि आपके व्यवहार की जन-जन के सामने चर्चा करे। यह वर्षायोग जैन बोर्डिंग हाउस, वीरनगर, कचहरी रोड, कमलानगर में नहीं हो रहा है, बल्कि यह मेरठ महानगर में हो रहा है। परस्पर के भेद भाव को भुलाकर एकता के सूत्र में बँधकर कार्य करें। चारों दिशाओं में 20-20 कि.मी. की मर्यादा करते हुए उपाध्याय श्री ने कहा कि आज से हम सभी दीपावली तक के लिए बन्धन में बँध रहे हैं। चातुर्मास स्थापना की क्रियाओं के पश्चात् बाजों की ध्वनि के साथ श्रीचन्द्र जी के कर कमलों द्वारा मंदिर में मंगलकलश स्थापित किया गया। *हंस कुमार जैन, वैभव कैरियर्स, प्रथम तल, 247, दिल्ली रोड, मेरठ*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धार्मिक और धर्मात्मा : दो भिन्न व्यक्तित्व

मुनि श्री समतासागर

टीकमगढ़ में दिये गये रविवारीय प्रवचन का अंश

श्रद्धा ऐसी होती है, भावना व भक्ति ऐसी होती है, जहाँ समर्पण हो, जहाँ सेवा हो। भक्ति और श्रद्धा की कोई जाति-पाति नहीं होती, कोई वर्ग भेद नहीं होता, जो भी श्रद्धा को धारण करता है उसी की प्यास बुझती है। वही संतृप्त होता है। सच्ची श्रद्धा को अपनाकर ही व्यक्ति धर्म से जुड़ सकता है। जब तक सच्ची श्रद्धा, सच्ची आस्था धर्म के प्रति नहीं होगी तब तक आत्मा का कल्याण संभव नहीं है। श्रद्धा तो जल के समान है। जल ने कभी भेदभाव नहीं किया कि हम गरीब की या अमीर की प्यास बुझायेंगे कि हम मनुष्य की या पशु पक्षियों की ही प्यास बुझायेंगे। जल को तो जिन्होंने पिया उसी की प्यास समाप्त हुई। जल तो सब की प्यास बुझाने के लिये है। इसीलिए आचार्य ने कहा है कि सच्ची श्रद्धा से जिन्होंने भी धर्म का आश्रय लिया, धर्म ने उन सभी प्राणियों की प्यास बुझाई है। धर्म तो सूर्य के प्रकाश की तरह है कि यदि आप दरवाजे और खिड़कियाँ बंद भी करलें तो भी सूर्य उजाले को उस घर में जरूर भेजता है। धर्म तो उस उद्यान के समान है जिसमें सभी प्रकार के पुष्प पुष्पित हो रहे हैं, लेकिन सुगन्ध किस पुष्प की है यह निश्चित नहीं कहा जा सकता। गंध पर किसी एक फूल का अधिकार नहीं माना जा सकता। सुगंध कभी बँट नहीं सकती। पानी और प्रकाश कभी बँट नहीं सकते और यही धर्म की पहचान है कि धर्म कभी बँटता नहीं है। धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा की सौंधी सुगंध ही सम्पूर्ण मानव समाज का कल्याण कर सकती है। रोशनी जहाँ भी जायेगी प्रकाश फैलायेगी। देश की खुशहाली के लिये सैनिक, अनाज एवं राष्ट्र के प्रति सच्ची आस्था का होना बहुत जरूरी है। इन तीनों में से अनाज और सैनिक की कमी भी पड़ जाये तो कोई बात नहीं, इनकी कमी से भी काम चल सकता है। परन्तु राष्ट्र के प्रति यदि आस्था डगमगा जाये, देशभक्ति डगमगा जाये तो देश का काम नहीं चल सकता। यदि देश में धार्मिक वातावरण है, यदि लोग शांतिपूर्वक रह रहे हैं और धर्म कर रहे हैं तो यह मानिये

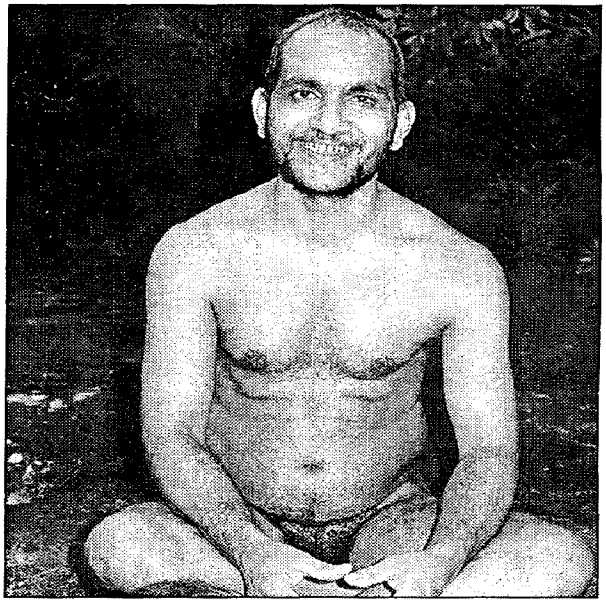

कि कानूनी व्यवस्था ठीक है। देश की सीमाएँ सुरक्षित हैं तो धार्मिक आयोजनों का छठवाँ हिस्सा राजा के खाते में जाता है। वैभव के महल बहुत दिनों तक नहीं टिकते, रघुवीर की कुटिया तो शाश्वत है क्योंकि वहाँ श्रद्धा का धर्म है। श्रद्धा के वशीभूत हो श्रीराम ने शबरी के बेर खाये। श्रद्धा की खातिर ही चन्दन बाला की रक्षा हुई। वैभव के महल तो खण्डहर में बदल गये पर आस्था/श्रद्धा के बल पर धर्म की कुटिया सम्पूर्ण देश में जगमगा रही है। इसलिये हे मानव श्रद्धावान बनो, तभी तुम्हारा कल्याण संभव है।

दुनिया के लोग अपने जीवन को बगैर मूल्यों के खराब करना चाहते हैं, लेकिन वह नहीं जानते कि धर्म वह आधार है, वह बुनियाद है जिस पर अपने जीवन के महल को खड़ा कर सकते हो। धर्म के अभाव में न तो कोई व्यक्ति संसार में जी सकता है और न ही जी सकेगा। जिस व्यक्ति ने धर्म के मूल स्वरूप को अपने जीवन में उतार लिया, संसार की कोई प्रतिकूलता उसका कुछ नहीं कर सकती। जिसने धर्म का आश्रय लिया, बड़ी से बड़ी बाधाएँ उसका कुछ नहीं कर सकतीं। इसलिये सम्पन्न जीवन जीने के लिये धर्म का आलम्बन बहुत जरूरी है।

जिस व्यक्ति के जीवन में धर्म स्थान पा लेता है उस व्यक्ति के जीवन का वृत्त बदल जाता है। संसार की कोई भी प्रतिकूलता वहाँ नहीं रहती। धर्म वहाँ है जहाँ अधर्म नहीं है। चोरी अधर्म है, हिंसा अधर्म है, झूठ अधर्म है तो करुणा, दया, प्रेम, वात्सल्य, कर्तव्य और श्रद्धा धर्म हैं। यदि हमारे जीवन में करुणा, दया, प्रेम, कर्तव्य, श्रद्धा का अंश मात्र भी है तो उसकी झलक हमारे व्यवहार में दिखाई अवश्य पड़ेगी। इसलिये दया, करुणा आदिभाव हमारे जीवन में जब तक नहीं आते, तब तक धर्म को पहचानना बहुत कठिन है। और जब तक धर्म को नहीं पहचानोगे तब तक जीवन का रूपांतरण बहुत कठिन है। जिसने धर्म के स्वरूप को नहीं समझा उसका जीवन व्यर्थ है। धार्मिक और धर्मात्मा दो प्रकार के व्यक्ति होते हैं। धार्मिक होना अत्यंत सरल है। धार्मिक होने का मतलब धर्म की प्रक्रिया करना है। धर्मात्मा होना बहुत कठिन है, क्योंकि धर्म को अपनी आत्मा में बसा लेना ही धर्मात्मा की पहचान है। इसलिये आप धार्मिक होने को अपने जीवन की उपलब्धि मान लेने की भूल मत करना। जब तक धर्मात्मा के गुण अपने जीवन में न आ जायें, तब तक लोक में तो प्रतिष्ठा मिल सकती है, परलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हो सकती है। इसलिय धर्मात्मा ही बनो, तभी आत्मा का कल्याण संभव है। धार्मिक की सुगंध तो कागज की फूल की तरह होती है, धर्मात्मा की सुगंध डाल के फूल की तरह होती है।

प्रस्तुति : अखिलेश सतभैया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाखों घर बर्बाद हुए इस दहेज की होली में

टीकमगढ़ में दिये गये प्रवचन का अंश

मुनि श्री प्रमाणसागर

आज समाज में दहेज की समस्या बहुत विकराल हो गई है जो आज हमारी संस्कृति के लिये अभिशाप बन गई है। दहेज की शुरुआत मध्य युग में हुई, उस समय 12 से 14 वर्ष तक की कन्याओं की शादी होती थी। इससे बड़ी उम्र की कन्या से कोई विवाह नहीं करता था और यदि कन्या की उम्र 15 वर्ष से ऊपर हो जाती तो ब्रह्महत्या का पाप कन्या के पिता को लगता था। इस धर्म की आड़ में शीघ्र कन्या का विवाह हो जाये इस हेतु कन्या के पिता अधिक धन देकर योग्य वर अपनी कन्या के लिये ढूँढने लगे और दहेजरूपी दानव ने जन्म ले लिया। आज दहेज रूपी वृक्ष फल-फूल रहा है, पर प्रश्न उठता है इसे कौन सींच रहा है? इसके लिये कन्या पक्ष व वरपक्ष दोनों उत्तरदायी हैं। कन्या पक्ष योग्य वर की तलाश में नये-नये प्रलोभन देता है। यही कारण है कि गुणवती कन्या को योग्य वर नहीं मिल पाता। गुणहीन कन्या अच्छे वर को वरण कर लेती है। ऐसे बेमेल विवाह से जीवन में समरसता नहीं आ पाती, क्योंकि जहाँ परिणय खरीद-बिक्री, ऊँची बोली पर आधारित होते हैं। वहाँ सुख और शांति का वृक्ष पुष्पित और पल्लवित हो नहीं सकता।

एक जमाना था जब कन्या जन्म लेती थी तब मातम मनाया जाता था और मध्य काल के प्रारंभ में कन्या जन्म लेती थी तो मार दिया जाता था। आज के वैज्ञानिक युग में तो भ्रूणपरीक्षण कर कन्याओं को जन्म लेने से पहले ही कोख में मार दिया जाता है। अब तो कन्याओं को जन्म लेने का भी अधिकार नहीं है। यह दहेजरूपी दानव का परिणाम है कि आज आप के घरों की शोभा, कलेजे का टुकड़ा, आप के आँगन की किलकारी, कन्या जब जन्म लेती है तो मातम मनाया जाता है और बेटे के जन्म में खुशी मनायी जाती है। किसी के चार-पाँच बेटे क्या हुए कि घर में कल्पवृक्ष उग आया, जितना चाहो उसे भुनाओ। मुनिश्री ने कहा कि बड़े-बड़े धर्मात्मा जो धर्म के कार्यों में आगे रहते हैं, धर्मसभाओं में अग्रिम पंक्ति में बैठते हैं वे जब दहेज की बात आती है तो लाखों माँगने में नहीं चूकते। जैसे लड़के का विवाह नहीं कोई व्यापार हो गया हो। लड़की के सुन्दर होने का आधार आज नोट बन गये हैं, नोटों का बण्डल यदि भारी है तो कन्याएँ योग्य व सुन्दर हो जाती हैं। आज जैन समाज भी इस पतन के मार्ग पर अग्रसर है, बहुत सी ऐसी कन्याएँ हैं जिन्हें शादी के बाद भी दहेज की लिप्सा में मायके (पीहर) छोड़ दिया जाता है। जरा सोचो, विचार करो, दुल्हन से बड़ा भी कोई दहेज होता है? कन्या के बलबूते पर तुम्हारे वंश की अमरबेल बढ़ती है। तुम्हारा नाम चलता है इसलिये कन्यारूपी रत्न से कीमती रत्न तुम्हें नहीं मिल सकता। 20 वर्ष तक कन्या की शिक्षा-दीक्षा, पालन-पोषण पर औसतन चार से पाँच लाख रुपया खर्च आता है, आँखों के झूले और प्यार के आँगन में पली-पुसी कन्यारूपी हृदय का टुकड़ा आपको सौंप दिया जाता है, इससे बड़ा त्याग पृथ्वी पर दूसरा नहीं है।

आदिनाथ भगवान की ब्राह्मी और सुन्दरी दोनों बेटियों ने प्रण किया कि पूज्य पिता का जो माथा कभी नहीं झुका वो हमारे कारण भी न झुके, इसलिये आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लेकर वैराग्य धारण कर लिया। दहेज जैसे भस्मासुर का अंत करने के लिये कन्याओं को दुर्गा बनकर आगे आने की जरूरत है। कन्याओं को वर का तो वरण करना चाहिए पर दहेज के भिखारियों का बहिष्कार करना चाहिए, क्योंकि शादी वर से होती है किसी भिखारी से नहीं।

लाखों घर बर्बाद हुए हैं,
इस दहेज की होली में।
सजी-सजाई लाखों दुलहन,
बैठ न पायी डोली में।।

मुनिश्री ने युवाओं को उद्वेलित करते हुए कहा कि जब प्रत्येक बात आप नहीं मानते तो दहेज के वक्त तुम्हारा कंठ क्यों अवरुद्ध हो जाता है, तुम्हारी जुबान क्यों लड़खड़ाने लगती है, विरोध क्यों नहीं करती, तुम्हारा स्वाभिमान, सम्मान क्या मर चुका है या तुम्हें अपने बाजुओं पर दो वक्त की रोटी कमाने का भरोसा नहीं रहा? आज नारी जाति के घट रहे सम्मान को यदि कोई रोक सकता है तो केवल युवा। क्यों हो रहा है नारी जाति का इतना अवमूल्यन, क्यों आपकी बहिन और बेटियाँ अपमान का घूँट पी रही हैं? इसके पीछे जितना उत्तरदायी पुरुष वर्ग है उससे कहीं ज्यादा महिला वर्ग जिम्मेदार है। मुनिश्री ने कहा कि स्टोव फटने से बहुएँ जलती सुनी गईं पर आज तक ऐसा स्टोव नहीं बना जिससे सास या ननद जली हो। बहुएँ ही क्यों जलती हैं, आप ने कभी विचार किया? सोचने का विषय है। इसलिये बंधुओं अपनी कन्या की कुण्डली लड़के से बाद में मिलाना पहले सास और ननद से मिल लेना, पटेगी कि नहीं? अन्यथा निर्जीव स्टोव भी घर में पक्षपात करने लगेगा।

मनुष्य पैसे का इतना भूखा हो गया है कि जीती-जागती देवी लक्ष्मी-सी मूर्ति को भी जलाने से नहीं चूकता। जो लोग ऐसा करते हैं वे यह सोचें कि तुम्हारी बेटी के साथ ऐसा कार्य किया जाए तो तुम्हारे ऊपर क्या बीतेगी? कभी विचार किया, वह भी किसी की बहिन है, किसी की बेटी है? व्यक्ति के ऊपर जो धन की दीवानगी छा गई है उस पर अंकुश लगना चाहिए।

यदि आज समाज के धनाढ्य व्यक्ति गरीब की बेटियों को बहू बनाने का संकल्प ले लें तो यह संदेश समाज में दहेज रूपी दानव को नष्ट कर सकता है। बंधुओं ताली बजाने से काम नहीं चलेगा, दहेज के विरोध के लिये ताल ठोककर आगे आने की जरूरत है। आज आप लोग संकल्प लें कि दहेज के अभाव में हमारे समाज की कोई कन्या कुँवारी नहीं रहेगी। तुम मंदिर बनवाते हो, लाखों का दान देते हो, जितना पुण्य तुम दान देकर प्राप्त करते हो उतना ही पुण्य किसी गरीब की बेटी की शादी में मदद करने से तुम्हें मिलेगा।

प्रस्तुति : अखिलेश सतभैया, टीकमगढ़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्षायोग-प्रतिष्ठापन

मुनिद्वय श्री समतासागर जी एवं श्री प्रमाणसागर जी

टीकमगढ़ में परमपूज्य संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर महराज के परम शिष्य मुनि श्री 108 समता सागर एवं मुनि श्री 108 प्रमाणसागर व ऐलक श्री 105 निश्चय सागर जी महाराज के चातुर्मास व मंगल कलश की स्थापना का कार्यक्रम विधि विधान व मंत्रोचारण के बीच सम्पन्न हुआ।

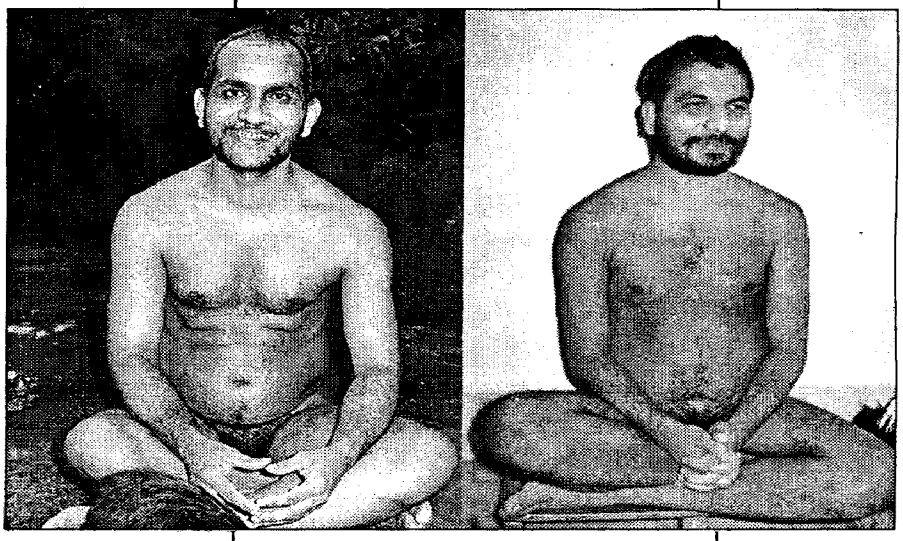

चातुर्मास के प्रथम दिन धर्म सभा में बोलते हुए मुनि श्री 108 समता सागर जी ने कहा, 'कबिरा बदरी प्रेम की हमपे बरखा आई, अंतर भीगी आत्मा हरी भरी बदराई'। चातुर्मास के काल में हरी-भरी प्रकृति की गोद में श्रावकों का जीवन धर्म से भरा रहे।

आज का दिन संकल्प का दिन है, आज संकल्प के साथ जो माँगोगे वह मिलेगा, राम माँगोगे तो राम मिलेंगे, महावीर माँगोगे तो महावीर मिलेंगे। हमें घर-घर में श्रद्धा के कलश रखना हैं। घर-घर में ज्ञान का दीप प्रज्वलित करना है। घर-घर में आचार्य श्री के चित्र स्थापित कर संपूर्ण मानव समाज को आलोकित करना है। यह संयोग आपके पुण्य से बना है कि कल ही परम पूज्य आचार्य श्री 108 गुरुवर विद्यासागर जी महाराज का आशीर्वाद हमें प्राप्त हुआ। जब मंगलाचरण ही सर्वाधिक मंगलमय हो, इतना प्रभावकारी हो तो सम्पूर्ण चातुर्मास कितना प्रभावकारी होगा! मुनि श्री ने कहा कि पच्चीस किलोमीटर तक की सीमा चातुर्मास में बनाई है, 'संत का जीवन तो लालिमा है, पूरब दिशा की भाँति संत का काम तो सारी धरती को जगाना है। गहन पीर के बाद नव शिशु का दर्शन होता है।

पूज्य मुनि श्री 108 प्रमाणसागर जी महाराज ने धर्म सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि चातुर्मास की चौकी में बाहर की यात्रा को विराम देकर अंदर की साधना करते हैं और चाहते है कि हमारी साधना का लाभ आपको भी मिल सके। साधुसान्निध्य के बल पर हम अपने जीवन को रूपांतरित करने की प्रक्रिया को अपना सकें। आचार्य श्री कहते हैं कि भगवान महावीर की परम्परा बाँटने की रही है, इसलिये बाँटने में कोई कमी नहीं रहेगी, यदि कमी होगी तो तुम्हारे पात्र की होगी। वर्षा योग में वर्षा की धार तो बहेगी, लेकिन इस मंच से धर्म की लगातार वर्षा होगी, जिसमें जैन धर्म के क, ख, ग, से लेकर क्ष, त्र, ज्ञ तक के अक्षय भंडार आपके बीच खोल दिए जायेंगे। इसके लिये आपको अपने जीवन के वाल्व, ट्यूब खोल के रखना चाहिए। इस अवसर पर परम पूज्य ऐलक 105 निश्चय सागर जी महाराज ने अपना मंगल आशीर्वाद धर्म सभा को दिया।

अखिलेश सतभैया, टीकमगढ़

डूबते सूरज में अभी उज़ास बाकी है

सम्यक्त्व भारती

डूबते सूरज में अभी उज़ास बाकी है
पर तौलते पंछी में अभी परवाज़ बाकी है

रात पूरी कट गई जिसके उजाले में
बुझते चिराग में अभी प्रकाश बाकी है

प्राण थक गये तो क्या हुआ जनाब
मरते हुए आदमी में अभी साँस बाकी है

जी सको तो जियो इंसान की तरह
वक्त के पन्नों पर अभी इतिहास बाकी है

कोई तो बचाये आके विनाश से इसे
अमन के बीच का अभी विकास बाकी है

आपके बिना मुझसे रहा नहीं जाता

सम्यक्त्व भारती

आपके बिना मुझसे रहा नहीं जाता
कहना चाहता हूँ बहुत पर कहा नहीं जाता

जख्म काँटों के लाख सह सकता हूँ मगर
घाव फूलों का मुझसे सहा नहीं जाता

रिश्तों की इबारत न जाने क्यों बदल गई
उनसे दीवानगी में बेका नहीं जाता

जहर मौत के लिए तमाम उम्र पीते रहे
जिन्दगी के वास्ते अमृत पिया नहीं जाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हर समस्या सुलझेगी, आप उलझना छोड़ दें

आर्यिका श्री पूर्णमती

दिनांक 8 जुलाई 2001 को भोपाल म.प्र. के टी.टी. नगर स्थित दि. जैन मंदिर में परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी की विदुषी शिष्या आर्यिका श्री पूर्णमती जी के ससंघ वर्षायोग का भव्य शुभारंभ कलशचतुष्टय की स्थापना के साथ हुआ जिसमें निम्नलिखित कार्य सम्पन्न किये गये-

1. मंगलाचरण : अजय जैन 'अहिंसा' वाकल (कटनी, म.प्र.)

2. दीप प्रज्ज्वलन : श्री अजित पाटनी

3. ध्वजारोहण : श्री विमलचन्द्र जैन, अलंकार वस्त्रालय

4. आचार्य श्री विद्यासागर जी के चित्र का अनावरण : श्री रवीन्द्र जैन

5. स्थापनाकलश की स्थापना श्री प्रकाशचन्द्र जी जैन,

6. मंगल कलश की स्थापना श्री संतोष कुमार जी जैन, संगीत सरिता वाले

7. ज्ञानकलश की स्थापना : श्री रमेशचन्द्र जी मनया

8. जीवदयाकलश की स्थापना : श्री वी.के. जैन

9. वन्दनीया आर्यिकाओं को शास्त्र भेंट : श्री मनोहरलाल जी टोंग्या आदि दस श्रावकों के द्वारा

10. वन्दनीया आर्यिका पूर्णमती जी को 'जिनभाषित' जून 2001 के अंक का समर्पण : प्रो. रतनचन्द्र जैन के द्वारा।

वन्दनीया आर्यिका पूर्णमती जी ने श्रावकों को सम्बोधित करते हुए कहा- आज हर घर में समस्याएँ हैं, हर शहर में समस्याएँ हैं, देश में भी कई समस्याएँ हैं। इन समस्याओं का मूल कारण यह है कि हम अध्यात्म से भटक गये हैं। उन्होंने कहा -

हर समस्या सुलझेगी, आप उलझना छोड़ दें।
हर मंजिल मिलेगी, आप भटकना छोड़ दें।।

आर्यिकाश्री ने बतलाया कि तमाम समस्याएँ हमने स्वयं पैदा की हैं। मनुष्य एक-दूसरे से आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा में अपनी आत्मा से दूर होता जा रहा है और जब उसे आत्मा का ज्ञान होता है तब बहुत देर हो चुकी होती है, वह बुढ़ापे में हताश होने लगता है कि यह जिन्दगी भी मैंने अपनी आत्मा के कल्याण के बिना ही निकाल दी। आर्यिकाश्री ने कहा कि एक बार सन्त नानक ने शिष्य से कहा कि एक समय आयेगा जब सारी दुनिया ठग हो जायेगी। शिष्य ने पूछा कि जब सारी दुनिया ठग हो जायेगी तब ठगा कौन जायेगा? नानक जी ने बहुत ही सुन्दर जवाब दिया- 'जो समय पर चूक जायेगा वह ठगा जायेगा।'

आर्यिकाश्री ने प्रबोधित किया कि अभी समय आपके हाथ में है। यदि समय पर चूक गये तो बुढ़ापे में अपने को ठगा हुआ पाओगे। तब पछताने के अलावा और कुछ भी हाथ नहीं लगेगा। आर्यिकाश्री ने कहा कि गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी ने मुझे यह कहकर भोपाल भेजा है कि मैं यहाँ के लोगों की तमाम बुराइयाँ, परेशानियाँ और संकट अपनी झोली में ले लूँ और बदले में गुरुवर ने अपनी अमृतवाणी से मुझे अध्यात्म के जो अनमोल मोती दिये हैं वे आपकी झोली में डाल दूँ। यह आपके ऊपर है कि आप इस चातुर्मास में इन मोतियों को लेने के लिये कितना समय निकाल पाते हैं।

जिनभाषित को आशीर्वाद

आर्यिकारत्न पूर्णमती जी ने 'जिनभाषित' को आशीर्वाद देते हुए कहा- ''जिनभाषित'' में बिन्दु में सिन्धु समाया है। यह पत्रिका वर्तमान भौतिक चकाचौंध के वातावरण में जन-जन की चेतना को अन्तर्मुखी बनाने का सामर्थ्य रखती है। वास्तव में मानवमात्र के लिये मानवता का संदेश प्रदान कर सकने में यह पत्रिका पूर्णतः सक्षम है। विभिन्न विषयों से ओतप्रोत 'ज्ञानामृतपान' इसके गम्भीर अध्ययन से संभव है।

यह पत्रिका समाज में व्याप्त अज्ञान एवं कुरीतियों पर नियन्त्रण करने व सम्पूर्ण मानव समूह के लिये उपयोगी एवं आदरणीय बनेगी ऐसी आशा है, क्योंकि प्रकाशित होने के पूर्व ही इसे अनेक सन्तों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ है। अभी तक कई पत्रिकाएँ निकलीं, उनको पढ़ने से लोगों की पत्रिकाओं को पढ़ने की मानसिकता प्रायः समाप्त होती चली जा रही है, क्योंकि उनमें ज्ञानवर्धक सामग्री की बजाय व्यक्तिगत आक्षेपों और विवादों की ही भरमार रहती है।''

आर्यिकाश्री ने आगे कहा -''आज जैसे विश्वभर की जानकारी के लिये घर-घर में टी.वी. की जरूरत महसूस की जाती है वैसे ही जिनागम के हृदय को पढ़ने के लिये, रहस्य को जानने के लिये गुरु-आशीष से प्रकाशित इस पत्रिका की जनमानस को आवश्यकता प्रतीत होगी। विशेष यह कि इस पत्रिका में साधु सन्तों या विद्वानों की निन्दा/आलोचना नहीं है इसलिये यह 'सत्यं शिवं सुन्दरं' की बोलती तस्वीर है। अन्त में यही भावना है कि 'जिनभाषित' पत्रिका गुरुकुल दीपक की तरह जलकर जन-जन के लिये धर्म का प्रकाश देती रहे।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्वराज पर्युषण : प्रदूषण-मुक्ति का पर्व

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

डॉ. सुरेन्द्र 'भारती' प्राध्यापक होने के साथ-साथ मर्मस्पर्शी लेखनी के धनी एवं 'पार्श्वज्योति' मासिक के सम्पादक भी हैं। उनका यह लेख पर्युषणपर्व के विषय में नये ढँग से सोचने के लिये बाध्य करता है। 'भोगविलास से सृजन नहीं होता, तप-त्याग के साथ ही सृजन का रिश्ता है' गाँधी जी के इन शब्दों के द्वारा लेखक ने पर्यूषण पर्व की आराधना के मनोविज्ञान को सरलतया उद्घाटित किया है।

पर्वराज पर्युषण पर्व आ गया है। जो कुछ आत्मिक प्रदूषण छा गया था उसे दूर करने का प्रमुख माध्यम है पर्युषण पर्व। आत्माराधना, आत्मिक गुणों का अनुभरन, आत्मशक्ति का जागरण और आत्मनिष्ठा पर्युषण पर्व के वे लक्ष्य हैं जिन्हें पाकर मनुष्य कषाय रहित सच्चे सुख का अनुभव सहज ही करने लगता है। मानव कर्म कैसे हों? इस विषय में 'विदुरनीति' में लिखा है

दिवसेनैव तत्कुर्याद् येन रात्रौ सुखं वसेत्।
अष्टमासेन तत्कुर्याद् येन वर्षाः सुखं वसेत्।।
पूर्वे वयसि तत्कुर्याद् येन वृद्धः सुखं वसेत्।
यावज्जीवेन तत्कुर्याद् येन प्रेत्य सुखं वसेत्।।3/67-68।।

अर्थात् मनुष्य को दिन में ऐसे कार्य करना चाहिए कि रात में सुखपूर्वक सो सके (और रात में ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जो सुबह किसी को मुँह न दिखा सके)। वर्ष के आठ मास ऐसा उद्योग करना चाहिए कि वर्षा के चार मास सुखपूर्वक रह सके। आयु के पूर्वार्ध में यानी युवाकाल में ऐसे कार्य करना चाहिए कि वृद्धावस्था सुखपूर्वक व्यतीत कर सके। पूरे जीवनभर ऐसे श्रेष्ठ आचरण करने चाहिए कि मरने के बाद अगले जन्म में भी सुखपूर्वक रह सके।

अब ये नीति की बातें पालन के लिये नहीं, अपितु उदाहरण के लिये ही जैसे रह गयी हों? हम जितना अपनी परम्पराओं एवं संस्कृति से कटे हैं उतने ही धर्म से दूर हुए हैं, सुख से दूर हुए हैं। ऐसे में यह पर्युषण पर्व फिर आया है दिशादर्शन के लिये, सत्पथ पर ले चलने के लिए। यदि नहीं चले तो हम बचेंगे कैसे? कबीर ने ठीक ही कहा है-

पानी केरा बुदबुदा अस मानस की जात।
देखत ही छिपि जाइये ज्यौं तारे परभात।।

किन्तु आज इसकी परवाह किसे है? सब भरपूर जीना चाहते हैं, कैसे भी, किसी भी तरह, चाहे वह किसी भी कीमत पर हो। धर्म धारण करने का भाव था, एक दर्शन था जिसे प्रदर्शन का प्रतीक बना दिया गया है। जिन्दगी जीने के नाम पर हम क्रूरतम होते जा रहे हैं। हमारे घरों में मच्छर मारने, कॉकरोच मारने, जूँ मारने, चींटी मारने, छिपकली मारने, चूहा मारने से लेकर आदमी मारने तक की दवाएँ मौजूद हैं, फिर भी दरवाजे पर स्टीकर चिपके हैं 'अहिंसा परमोधर्मः' 'जिओ और जीने दो', 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्।' जैसा व्यवहार तुम अपने लिए चाहते हो, वैसा दूसरों के साथ भी करो। क्या स्टीकर्स का प्रदर्शन ही हमारे धर्म की इति है या हमारे धार्मिक होने का सर्टिफिकेट, विचारणीय है।

पर्युषण पर्व प्रदर्शन का नहीं, दर्शन का प्रसंग है, जिसमें हम विद्युत सजावट के साथ यह भी तो विचार करें कि इसमें कितने सूक्ष्म जीवों को प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा? हम फूलों का शृंगार करें किन्तु यह भी तो विचार करें कि इससे कितनी चींटियों को अन्ततः मरना पड़ेगा? धर्म विचार पूर्वक होता है। अतः बिना विचारे हम कुछ न करें तथा ऐसा भी न करें जिसमें बाह्य प्रदर्शन तो अच्छा हो, किन्तु जिसका अन्त दुःखद हो। गाँधीजी के जीवन का एक प्रसंग है। वे प्रतिदिन सुबह या शाम को दिल्ली में लालकिले के पास टहलने जाते थे। एक दिन उनके साथ चर्चित स्वतंत्रता सेनानी समाजवादी श्री रामनन्दन जी मिश्र भी टहलने के लिये गये। गाँधीजी ने उन्हें लालकिला दिखाते हुए पूछा, 'लाल किले के अंदर की क्या चीज उल्लेखनीय है?' रामनन्दन जी सोचने लगे, कुछ बोलते, इससे पहले ही गाँधीजी ने जवाब दिया कि लालकिले के अंदर बड़े कमरों के बीच जो नालियाँ गुजरती हैं, मुगल बादशाहों के राज में इन नालियों से इत्र, गुलाबजल वगैरह बहता था। यह भाग ही मुगल साम्राज्य के पतन का कारण बना।' गाँधीजी ने आगे कहा कि - 'भोग विलास से सृजन नहीं होता। तप-त्याग के साथ ही सृजन का रिश्ता है। भोग विलास का रास्ता तो पतन की मंजिल तक पहुँचाने के लिये अभिशप्त है।'

उक्त संस्मरण से हम अच्छी तरह जान सकते हैं कि भोग पतन का मार्ग है और व्यसनमुक्त धर्ममय जीवन उत्थान का मार्ग है। हमें ऐसा मार्ग ही प्रिय होना चाहिए। नीतिकार कहते हैं-

पाप समय निर्बल बनो, धर्म समय बलवान।
वैभव समय विनम्र अति, दुःख में धीर महान।।

अर्थात् जब पाप का समय हो तो हमें निर्बल बनना चाहिए ताकि हमसे कोई पाप कार्य न हो जाये। धर्म के समय अर्थात् जब धर्म का प्रसंग उपस्थित हो तो हमें तन,मन, धन से बढ़चढ़कर धार्मिक कार्य करना चाहिए ताकि अधिकाधिक पुण्य का संचय हो सके। वैभव पाकर हमें विनम्र बनना चाहिए ताकि अहंकार से बच सकें। तन, धन, वैभव का अहंकार दुर्गति का पात्र बनाता है जबकि विनम्रता सुगति की वाहक होती है। इसी प्रकार दुःख में हमें अत्यंत धैर्य धारण करना चाहिए। दुःख के समय हमें धैर्यरूप धर्म संबल प्रदान करता है। हम चाहते हैं कि 'हो भला' तो नीतिकार कहते हैं कि 'कर भला'। किन्तु हम चाहने और करने में विरोधाभासी आचरण करते हैं। यह विरोधाभासी आचरण हमें हर जगह विरोध की स्थिति पैदा करता है अतः इससे बचें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्व नियति का मोड़ है, पर्व जीवन की साधना का फल है, पर्व जीवन की भागमभाग के मध्य सुकून का क्षण है, पर्व वैभव-विलासिता के मध्य आत्मा के उत्थान का अवसर है, पर्व शान्ति का सागर है, पर्व मुक्ति का क्षण है, पर्व क्षमा, मृदुता, सरलता जैसे आत्मिक भावों को पहचानने का निमित्त है, पर्व धर्ममय जीवन के संस्कार पाने की पाठशाला है, पर्व आत्मिक बल की पहचान कराने वाला पारदर्शी यंत्र है, पर्व कुरीतियों, कुगुरुओं, कुसंगतियों के विसर्जन का महत् अवसर है, बस चाहिए उसे अपने तन,मन, धन का निर्मल स्पर्श। यदि यह स्पर्श, संगति मिल गयी तो धर्म का सुखद संगीत आपके जीवन में संचरित हो उठेगा।

धर्म के दशलक्षण उत्तम क्षमा (क्रोध कषाय का अभाव, बैर रहित स्थिति), उत्तम मार्दव (मान कषाय का अभाव, अहंकार रहित स्थिति), उत्तम आर्जव (माया कषाय का अभाव, सरल भाव, सरल परिणति), उत्तम शौच (लोभ कषाय का अभाव, पवित्रता का संरक्षण), उत्तम सत्य (असद् भावों/कार्यों का अभाव, सत्य व्यवहार), उत्तम संयम (आत्म नियंत्रण, इन्द्रिय विषयों पर नियंत्रण, जीव रक्षा का भाव), उत्तम तप (कर्मक्षय केलिये व्रत-उपवास), उत्तम त्याग (राग-द्वेष का त्याग, औषधि-ज्ञान-अभय और आहार रूप चार प्रकार का दान), उत्तम आकिंचन्य (मैं आत्म द्रव्य हूँ, मेरा कुछ भी नहीं है, सम्पूर्ण परिग्रह के प्रति अनासक्ति), उत्तम ब्रह्मचर्य (पूर्ण आत्मरति, आत्मरमण और आत्मविचरण) मानवीय संभावना की सार्थकता मोक्ष तक ले जाने वाले हैं।

आपके/सबके जीवन में धर्म का वास हो, आप सबका आचरण धर्ममय हो, इसी भावना के साथ पर्युषण पर्वराज के प्रसंग पर आत्मिक सफलता हेतु कोटिशः शुभकामनाएँ प्रेषित हैं।

एल-65, न्यू इंदिरा नगर (ए) अहिंसा मार्ग,
बुरहानपुर (म.प्र.) पिन-45031

जीवरक्षा के लये एक लाख इक्कीसहजार की राशि का संचय

परमपूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से शिवपुरी (म.प्र.) में पूज्य मुनिश्री क्षमासागर जी एवं पूज्य मुनिश्री भव्यसागर जी का पावन वर्षायोग महती धर्म प्रभावना के साथ सानन्द चल रहा है।

रक्षाबन्धन पर्व पर प्राणीमात्र की रक्षा का संकल्प कर जीवरक्षासंकल्पसूत्र बाँधा गया तथा जीवरक्षा के लिये जीवरक्षा कलश की स्थापना भी समाज की ओर से पूज्य मुनिद्वय के सान्निध्य में की गई तथा जीवरक्षा के लिये एक लाख इक्कीस हजार की राशि जीवरक्षा कलश एवं रक्षासूत्र के माध्यम से संचित की गई।

शिवपुरी नगरी में जबसे मुनि श्री क्षमासागर जी एवं मुनिश्री भव्यसागर जी का पावन वर्षायोग स्थापित हुआहै, तबसे शिवपुरी के इतिहास में पहली बार इतनी अधिक धर्म प्रभावना हो रही है कि प्रतिदिन महाराज के प्रवचन में समाज के बन्धुओं के अलावा जैनेतर समाज भी धर्मलाभ लेने के लिये दौड़ा आ रहा है। शिवपुरी समाज ऐसे परम उपकारी मुनियों को पाकर धन्य हो गया है।

प्रतिदिन महाराजश्री का मंगलप्रवचन हो या सायंकालीन भक्ति एवं शंकासमाधन का अनूठा कार्यक्रम, सम्पूर्ण कार्यक्रमों से समाज में एक धार्मिक वातावरण तैयार हो गया है। मुनिश्री क्षमासागरजी द्वारा श्रावकों की शंकाओं का समाधान सहजता एवं चित्ताकर्षक भाषाशैली के माध्यम से किया जाता है, जो अनूठी है। महाराजश्री के चातुर्मास से समाज को एक नई दिशा मिली है।

सुरेश जैन, मारौरा

गीत

पानी बहता जिन आँखों से पर पीड़ा के नाम

● *अशोक शर्मा*

पानी बहता जिन आँखों से पर पीड़ा के नाम
उनके नाम सुबह लिखूँगा और लिखूंगा शाम।
सबकी पीड़ा बाँट रहे जो, वे नेपथ्य हुए
ऐसे लोग मेरी रचना के केवल कथ्य हुए।
जो पीड़ा के स्वाँग रचाकर, पीड़ादार दिखे
हर बारी हर गीतकार ने उनके गीत लिखे।
गढ़-गढ़ मीलों के पत्थर जो खुद में रहे अनाम
उनके नाम सुबह लिखूँगा और लिखूँगा शाम॥1॥

जिन प्यासों ने सदा बुझाई कंठ-कंठ की प्यास
उनके घर तक आता कोई दिखा नहीं मधुमास।
जो खाली गागर दिखलाकर ताक रहे आकाश
उनका ही स्वर्णिम अक्षर से युग लिखता इतिहास।
इतिहासों ने गहन-उपेक्षा लिख दी जिनके नाम
उनके नाम सुबह लिखूँगा और लिखूँगा शाम॥2॥

जिनने कंटक बीन पंथ के पथ को सरल किया।
उन लोगों को भर-भर प्याली युग ने गरल दिया
जिन लोगों ने आग तेजकर लपट बढ़ाई और
उन लोगों का वर्तमान में चमक-दमक का दौर
जेठ-दुपहरी जिनके तन ने हँस-हँस झेला घाम
उनके नाम सुबह लिखूँगा और लिखूँगा शाम॥3॥

36-बी, मैत्रीविहार, सुपेला,
भिलाई, जिला-दुर्ग (छत्तीसगढ़)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भक्ति, स्वाध्याय एवं क्षमादिभावों का मनोविज्ञान

प्रो. रतनचन्द्र जैन

आत्मा के मन्दकषाय-परिणाम को विशुद्धता कहते हैं। इससे अशुभ-कर्मों का संवर और निर्जरा तथा शुभकर्मों का आस्रव-बन्ध होता है। विशुद्धता के विकास में संयम, तप, अपरिग्रह, भक्ति, स्वाध्याय तथा क्षमादिभाव मनोवैज्ञानिक भूमिका निभाते हैं। पूर्व आलेख में प्रथम तीन तत्त्वों की मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रकाश डाला गया था। प्रस्तुत आलेख अन्तिम तीन साधनों के मनोविज्ञान का अनावरण करता है।

भक्ति का मनोविज्ञान

इन्द्रियसंयम द्वारा इंद्रियों के भोगव्यसनरूप निमित्त को दूर कर देने पर भी इन्द्रियविषयों के दर्शन, चिन्तन, स्मरण आदि के निमित्त से तीव्ररागादि की उत्पत्ति सम्भव है। अतः इन निमित्तों को टालने के लिए पञ्चपरमेष्ठी के भजनपूजन, गुणकीर्तन, चरितश्रवण आदि शुभ निमित्तों का अवलम्बन अत्यन्त आवश्यक होता है। मंगलमय आत्माओं के मंगलमय गुणों के चिन्तन-स्मरण के निमित्ति से तीव्र कषायोदय के निमित्त टल जाते हैं और सत्ता में स्थित शुभाशुभ कर्मों की स्थिति और अशुभ कर्मों का अनुभाग हीन हो जाता है, जिससे आगे भी मन्दकषाय का ही उदय होता है। पंडित टोडरमल जी लिखते हैं-

''भक्ति करने से कषाय मन्द होती है। अरहंतादि के आकार का अवलोकन करना, स्वरूप का विचार करना, वचन सुनना, निकटवर्ती होना या उनके अनुसार प्रवर्तन करना इत्यादि कार्य तत्काल निमित्त बनकर रागादि को हीन करते हैं।'' (मो.मा.प्र. पृष्ठ 7)

जैसे इन्द्रियविषय एवं असत्पुरुषों का संसर्ग तीव्र कषाय के उदय का निमित्त बनता है, वैसे ही पञ्चपरमेष्ठीरूप प्रशस्तविषयों के दर्शनादि मन्दकषायरूप विशुद्ध परिणामों के निमित्त बनते हैं। आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने बतलाया है कि जिनदेव, जिनमन्दिर, जिनागम, जिनागम के धारक, सम्यक् तप और सम्यक् तप के धारक, ये छह आयतन सम्यक्त्व प्रकृति के उदय के निमित्ति हैं और इनसे विपरीत अर्थात् कुदेवादि छह आयतन मिथ्यात्व प्रकृति के उदय के निमित्त हैं। (गोम्मटसार कर्मकाण्ड/गाथा 74) भक्ति की उपयोगिता बतलाते हुए आचार्य अमृतचन्द्र कहते हैं-

''भक्तिरूप प्रशस्तराग का अवलम्बन पुण्यबन्ध का स्थूल लक्ष्य रखनेवाले भक्तिप्रधान अज्ञानी (मिथ्यादृष्टि) करते हैं। कभी-कभी अनुचित विषयों में रागवृत्ति रोकने के लिए अथवा तीव्रकषायोदय का निरोध करने हेतु शुद्धोपयोग से च्युत ज्ञानी भी करते हैं।''[1]

भक्तिभाव से भरे मन में अशुभभावों के लिए अवकाश कहाँ से मिल सकता है? इस तथ्य का निरूपण कवि रहीम ने बहुत ही सुन्दर शब्दों में किया है -

प्रीतम छबि नयनन बसै, पर छबि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, आप पथिक फिर जाय।।

- जिन आँखों में अपने आराध्य की छबि बसी होती है, उनमें किसी दूसरे की छबि कैसे समा सकती है? सराय भरी देखकर पथिक अपने आप लौट जाता है।

इस प्रकार तीव्रकषायोदयरूप संक्लेशपरिणाम के निमित्तों को टालने के लिए भक्ति एक शक्तिशाली उपाय है।

स्वाध्याय का मनोविज्ञान

स्वाध्याय भी इसका एक उत्तम साधन है। इसके द्वारा मन तत्त्वों के गूढ़ चिन्तन में खो जाता है। फलस्वरूप वस्तुस्वभाव के चिन्तन-मनन से जो स्वपरतत्त्व, हिताहित एवं हेयोपादेय का विवक होता है उसके बल से चारित्रमोह का तीव्रोदय नहीं हो पाता। चित्त खाली न रहने से उसमें विषय-वासनाओं का भी प्रवेश नहीं होता। भक्त कवि तुलसीदास जी ने यह तथ्य इस सूक्ति में अत्यन्त हृदयस्पर्शी शब्दों में प्रस्तुत किया है -

मन पंछी तब लगि उड़ै विषयवासना माँहि।
ज्ञान बाज की झपट में जब लगि आया नाँहि।।

पंडित टोडरमल जी का कथन है- ''तत्त्वनिर्णय करते हुए परिणाम विशुद्ध होते हैं, उससे मोह के स्थिति-अनुभाग घटते हैं।''[2]

तत्त्वचिन्तनजन्य आनन्दानुभूति के निमित्त से असातावेदनीय का भी उदय नहीं हो पाता। यदि उसका उदयकाल आ जाता है, तो सातावेदनीय में संक्रमित होकर सातारूप फल ही देता है।

इस तरह स्वाध्याय भी तीव्रकषायोदय का निरोधकर विशुद्ध परिमामों के विकास का शक्तिशाली माध्यम है, कदाचित् भक्ति से भी अधिक।[3]

क्षमा-समता-अहिंसादि भावों का मनोविज्ञान

आत्मा के अपने क्षमा, समता, धैर्य, विवेक, अहिंसा (अनुकम्पा) आदि भाव भी तीव्रकषायोदय के निमित्तों को निष्प्रभावी बनाने के अमोघ साधन हैं।

'चारित्रसार' में कहा गया है - ''क्रोधोत्पत्तिनिमित्तानां सन्निधानेऽपि कालुष्याभावः क्षमा'' अर्थात् क्रोध उत्पन्न करने वाले निमित्तों के होने पर भी कालुष्य (क्षोभ) का अभाव होना क्षमा है। आचार्य शुभचन्द्र का कथन है -

प्रत्यनीके समुत्पन्ने यद्धैर्यं तद्धि शस्यते।
स्यात्सर्वोपि जनः स्वस्थः सत्यशौचक्षमास्पदः।।[5]

- स्वस्थचित्तवाले तो प्रायः सभी सत्य, शौच, क्षमादि से युक्त होते हैं, किन्तु शत्रु द्वारा उपसर्ग किये जाने पर धैर्य रखना ही वास्तविक धैर्य है।

ये कथन इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि जिन निमित्तों से क्रोधादि जनक कर्मों का उदय होता है, वे यदि उपस्थित हों,तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी उनके प्रभाव को नष्ट कियाजा सकता है और क्रोधादि के उदय को रोका जा सकता है। निमित्तों के प्रभाव को नष्ट करने की शक्ति आत्मा के क्षमा, समता, धैर्य, अनुकम्पा, आर्जव, मार्दव, विवेक, अहिंसा-निष्ठा, सत्य-निष्ठा, अस्तेय-निष्ठा, ब्रह्मचर्य-निष्ठा, अपरिग्रह-निष्ठा, आदि आदर्श भावों में है, जैसा कि ज्ञानार्णवकार आचार्य शुभचन्द्र ने कहा है -

शमाम्बुभिः क्रोधशिखी निवार्यतां, नियम्यतां मानमुदारमार्दवैः।
इयं च मायार्जवतः प्रतिक्षणं, निरीहतां चाश्रय लोभशान्तये।।[6]

- क्रोधाग्नि को क्षमारूपी जल से शान्त करना चाहिए, मान को मार्दव से दूर करना चाहिए, माया को आर्जव से तथा लोभ को निःस्पृहता से निरस्त करना चाहिए।

स्वामी कुमार का भी कथन है- "जो साधु समभाव और सन्तोषरूपी जल से तीव्रलोभरूपी मल को धोता है, उसी के शौच धर्म होता है।"[7]

क्षमा, मार्दव, आर्जव, समता, धैर्य आदि भाव ज्ञान से उत्पन्न होते हैं। आत्महितकारी होने से ज्ञानी आत्मा का इनमें अत्यधिक आदरभाव होता है, इनमें उसकी दृढ़ निष्ठा होती है। इन आदरणीय भावों में स्थित रहने का ही विवेकी जीव सदा अभ्यास करता है। ये उसके जीवन के प्रिय लक्ष्य होते हैं। इसलिये जब भी क्रोधादि-कर्मों के उदय के निमित्त उपस्थित होते हैं, वह क्षमादि भावों में स्थिर रहने के लिए दृढ़ हो जाता है और क्रोधादि के निमित्तों को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता। जैसे कोई उसे गाली देता है, तो वह गाली से उत्तेजित होने में अपनी हानि का ख्याल कर क्षमाभाव में स्थित हो जाता है और गाली से विचलित नहीं होता। इससे गाली निष्प्रभाव हो जाती है और क्रोधकर्म के उदय का निमित्त नहीं बनती। इसी प्रकार असातावेदनीय कर्म के उदय में कोई उसे पत्थर मारता है, तो पत्थर की पीड़ा को वह ज्ञान के बल से अनार्तभावपूर्वक सह लेता है। परिणामस्वरूप आर्तभाव के अभाव में तीव्रकषाय का उदय नहीं होता। इसी तरह निःस्पृहता लोभ के निमित्तों को, निर्भयता भय के निमित्तों को, मार्दव मान के निमित्तों को, आर्जव माया के निमित्तों को, सम्यक्त्व शोकादि के निमित्तों को प्रभावहीन बनाकर उक्त कषायों के उदय को असम्भव बनाते हैं।

कर्मोदय के निमित्तों को शक्तिहीन बना देने वाले साधक को ही योगी और शूर कहा गया है-

गुणाधिकतया मन्ये स योगी गुणिनां गुरुः।
तन्निमित्तेऽपि नाक्षिप्तं क्रोधाद्यैर्यस्य मानसम्।।[8]

- जिस मुनि का मन क्रोधादि के निमित्त मिलने पर भी क्रोधादि से विक्षिप्त नहीं होता, वही गुणाधिक्य के कारण योगी और गुणीजनों का गुरु है।

जो णवि जादि वियारं तरुणियण-कडक्खबाणविद्धो वि।
सो चेव सूरसूरो रणसूरो णो हवे सूरो।।[9]

- जो युवतियों के कटाक्षरूपी बाणों से बेधा जाने पर भी विकार को प्राप्त नहीं होता, वही सच्चा शूर है, रणशूर शूर नहीं है।

कर्मोदय के निमित्तों को निष्प्रभावी बनाकर ही तीव्र क्रोधादि को रोका जा सकता है, कर्मोदय हो जाने पर नहीं, क्योंकि कर्म का उदय होने पर कषायादिरूप फल का अनुभव हुए बिना नहीं रहता। फलानुभव कराने का नाम ही विपाक या उदय है, जैसा कि पूज्यपाद स्वामी ने कहा है- "द्रव्यादिनिमित्तवशात् कर्मणां फलप्राप्तिरुदयः।"[10]

गोम्मटसार कर्मकाण्ड की जीवतत्त्वप्रदीपिका टीका (गाथा 264) में कहा गया है- "स्वस्वभावाभिव्यक्तिरुदयः, स्वकार्य कृत्वा स्वरूपपरित्यागो वा।" अर्थात् अपने फलदानरूप स्वभाव की अभिव्यक्त उदय कहलाती है अथवा अपना फलदानरूप कार्य कर कर्मस्वरूप का परित्याग उदय है। इस प्रकार कर्म स्वरूप या पररूप से फल दिये बिना अकर्मभाव को प्राप्त नहीं होता।[11]

सार यह कि कर्मोदय होने पर जीव के परिणाम उस कार्य की प्रकृति के अनुसार अवश्य हो जाते है, अतः चारित्रमोह की क्रोधादि प्रकृतियों का तीव्रोदय हो जाने पर आत्मा में कालुष्य (क्षोभ, संक्लेश) उत्पन्न हो ही जायेगा, तब कालुष्याभावरूप क्षमा कैसे सम्भव होगी? अतः निष्कर्ष यही है कि कर्मोदय के निमित्तों को टालकर या निष्प्रभावी बनाकर ही कालुष्याभावरूप क्षमा, मानाभावरूप मार्दव, मायाअभावरूप आर्जव, कामाभावरूप ब्रह्मचर्य आदि फलित होते हैं।

असातावेदनीय कर्म के उदय से उत्पन्न दुःख के समय यदि समताभाव धारण किया जाता है, तो आर्तभाव उत्पन्न नहीं होता। उत्पन्न हुए दुःख से द्वेष होना तथा सुख की आकांक्षा करना आर्तभाव कहलाता है। दुःख से घबराने, व्याकुल होने, विलाप आदि करने के रूप में यह द्वेष व्यक्त होता है। इससे नवीन असातावेदनीय का बन्ध होता है। किन्तु समताभाव धारण कर दुःख को धैर्यपूर्वक सहने से नवीन कर्म का बन्ध नहीं होता और उदय में आया हुआ कर्म फल देकर नष्ट हो जाता है। इस प्रकार समताभाव से संवरपूर्वक निर्जरा होती है, जो मोक्ष के लिए उपयोगी है। इस विषय में पं. सदासुखदास जी का निम्नलिखित विवेचन पठनीय है-

"बहुरि यो मनुष्यशरीर है सो वातपित्तकफादिक-त्रिदोषमय है। असातावेदनीय कर्म के उदयतैं, त्रिदोष की घटती-बधतीतैं ज्वर, कांस, स्वास, अतिसार, उदरशूल, शिरशूल, नेत्र का विकार, वातादि पीड़ा होते (होने पर) ज्ञानी ऐसा विचार करे हैं - जो ये रोग मेरे उत्पन्न भया है सो याकूं असातावेदनीय कर्म को उदय तो अन्तरंग कारण है, अर द्रव्यक्षेत्रकालादिक बहिरंग कारण हैं। सो कर्म के उदयकूं उपशम हुआ (कर्म के उदय का उपशम होने पर) रोग का नाश होयगा। असाता का प्रबल उदयकूं होते बाह्य औषधादिक हूँ रोग मेटने कूं समर्थ नाहीं है। अर असाताकर्म के हरने कूं कोऊ देव-दानव, मंत्र-तंत्र, औषधादिक समर्थ हैं नाहीं। यातैं अब संक्लेशकूं छांड़ि समता ग्रहण करना। अर बाह्य औषधादिक हैं ते असाता के मन्द उदय होतैं सहकारी कारण हैं। असाता का प्रबल उदय होतैं औषधादिक बाह्य कारण रोग मेटने कूं समर्थ नाहीं है। ऐसा विचारि असाताकर्म के नाश का कारण परम समता धारण करि संक्लेशरहित होय सहना, कायर नाहीं होना सो ही साधुसमाधि है। बहुरि इष्ट का वियोग होतैं अर अनिष्ट का संयोग होतैं ज्ञान की दृढ़ता तैं जो भय को प्राप्त नाहीं होना सो साधुसमाधि है।"[12]

'भगवती आराधना' की टीका के निम्न शब्द भी पठनीय हैं- "बड़े-बड़े धन्वन्तरि-सदृश वैद्य, इलाज के करने वाले, तो हू कर्म के उदयकरि आई रोगजनित वेदना, ताहि दूर करने कूँ समर्थ नाहीं। ... तातैं धैर्य धारण करि अपना बाँध्या कर्म का फल समभाव करि भोगो, तातैं तुमारे नवीन कर्म नाहीं होय, अर पूर्वे बाँध्या तिनकी निर्जरा होय। उदय में आया कर्म कूँ जिनेन्द्र, अहमिन्द्र, समस्त इन्द्र, देव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टारिने कूँ समर्थ नाहीं हैं। तातैं अरोक (अटल) जानि असाता का उदय में दुःख मति करो, दुःख करोगे तो अधिक असाता कर्म और बँधेगा, अर उदय तो टरेगा नाहीं। असातावेदनीयादिक अशुभकर्म कूँ उदय आवता समय विषै जो विलाप करना, रोवना, संक्लेश करना, दीनता भाखना निरर्थक है, दुःख मेटने को समर्थ नाहीं। केवल वर्तमान काल में दुःख बधावै (बढ़ाता है), अर आगाने (भविष्य में) तिर्यञ्चगति तथा नरक-निगोद कूँ कारण, ऐसा तीव्रकर्म बाँधे, जो अनन्तकाल हूँ में न छूटे। ... तातैं कर्म के ऋण तैं छूट्या चाहो तो कर्म के उदय में आकुलता त्यागि परमधैर्य धारण करो।''[13]

इस प्रकार क्षमा, समता, अहिंसा आदि भाव तीव्रकषायोदय के निमित्तों को निष्प्रभावी बनाकर विशुद्धता का विकास करते हैं।

संक्षेप में, संयम और तप शरीर को परद्रव्यों की अधीनता से मुक्त कर उसे परद्रव्येच्छारूप तीव्रकषाय के उदय का निमित्त बनने से रोकते हैं, अपरिग्रह, मूर्च्छारूप तीव्रकषायोदय के निमित्त को निरस्त करता है, भक्ति और स्वाध्याय विषयों के चिन्तन-स्मरण आदि के निरोध द्वारा चारित्रमोह के तीव्रोदय पर रोक लगाते हैं तथा क्षमा, समता, धैर्य, अहिंसादि भाव कर्मोदय के निमित्तों को प्रभावहीन बनाकर संक्लेशपरिणाम का प्रतीकार करते हैं। इस प्रणाली से विशुद्धता का विकास किस तरह होता है यह बात श्री जिनेन्द्रवर्णी के निम्न वचनों से अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है-

''व्यक्ति ज्यों-ज्यों हृदय में उतरता हुआ प्रेम (अहिंसाक्षमादिभावों) तथा समता के क्षेत्र में प्रवेश करता है, त्यों-त्यों सत्ता में पड़े अशुभकर्म शुभरूप में संक्रमण करने लगते हैं। आगे जाकर उदय में आने वाले ये शुभकर्म भी अपकर्षण द्वारा नीचे खिंचकर समय से पहले उदय में आने लगते हैं। वर्तमान में उदय में आने योग्य अशुभ निषेक उत्कर्षण द्वारा पीछे चले जाते हैं, अर्थात् वर्तमान में उदय में नहीं आते। फलस्वरूप परिणाम कई गुने अधिक विशुद्ध हो जाते हैं। इन वृद्धिंगत विशुद्ध परिणामों के निमित्त से उपर्युक्त संक्रमण, अपकर्षण तथा उत्कर्षण और अधिक वेग तथा शक्ति के साथ होने लगते हैं। परिणाम यह होता है कि विशुद्धि में अनन्तगुनी वृद्धि होने लगती है।''[14]

इन युक्तियों और प्रमाणों से सिद्ध है कि भक्ति, स्वाध्याय एवं क्षमादिभाव विशुद्धता के विकास के शक्तिशाली उपकरण हैं।

संदर्भ-

1. पंचास्तिकाय/तत्त्वदीपिका/गाथा 136
2. मोक्षमार्गप्रकाशक/पृष्ठ 112
3. सज्झायं कुव्वंतो पंचिंदियसंवुडो तिगुत्तो य।
   हवदि य एयग्गमणो विणएण समाहिओ भिक्खू॥ मूलाचार/गाथा 971
4. चारित्रसार/चामुण्डराय/59/2
5. ज्ञानार्णव 19/38
6. वही 19/72
7. समासंतोषजलेण जो धोवदि तिव्वलोहमलपुंजं।
   भोयणगिद्धिविहीणो तस्स सउच्चं हवे विमलं॥ कार्त्तिकेयानुप्रेक्षा/गाथा 397
8. ज्ञानार्णव 19/75
9. कार्त्तिकेयानुप्रेक्षा/गाथा 404
10. सर्वार्थसिद्धि 2/1
11. ''ण च कम्मं सगरूवेण परसरूवेण वा
    अदत्तफलमकम्मभावं गच्छदि विरोहादो।'' जयधवला 3/22/430/पृष्ठ 245
12. रत्नकरण्ड श्रावकाचार/षष्ठ-भावना अधिकार/पृष्ठ 265
13. भगवतीआराधना/गाथा 1619-1641
14. कर्मसिद्धान्त/पृष्ठ 145

कविता

सवाल

डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

दोस्तो!
सवाल यह नहीं है कि
रोटी, कपड़ा और मकान
मिलेगा या नहीं
सवाल तो यह है कि
इनकी प्राप्ति के उपाय
कितने पवित्र हैं
धर्म हो या धर्मात्मा
सभी कहते हैं कि
साधनों की पवित्रता
पवित्र साध्य की प्राप्ति कराती है
सुख देती है
और
साधनों की अपवित्रता
मिले हुए
रोटी, कपड़ा और मकान
को भी
दुःखदायी बना देती है
अब यह तुम्हें तय करना है
कि तुम
सुख चाहते हो
या दुःख?

म.दि.जैन हा.से. स्कूल, सनावद-451111 (म.प्र.)

भूल अपने को जब हुआ तन्मय

डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

भूल अपने को जब हुआ तन्मय,
पञ्चतत्त्वी तन हो गया चिन्मय।
जग उठी प्रज्ञा, चेतना फैली,
हो गई उज्ज्वल वीथियाँ मैली।
ढह गये ऊँचे भेद के टीले,
हँस उठे लोचन दुःख से गीले॥
द्वन्द्व कुण्ठाएँ गिर चरण रोये-
बीच नागों के जी रहा निर्भय।
भूल अपने को जब हुआ तन्मय॥
पञ्च तत्त्वी तन हो गया चिन्मय।
आ खड़े तीनों काल हम आगे,
यम वृषभ काले डर कहीं भागे।
रिद्धियाँ बैठीं डाल कर डेरा,
जो असम्भव था सिद्धि ने हेरा॥
बन्ध कर्मों के टूट कर बिखरे
हो गया अंशी अंश क्या विस्मय।
भूल अपने को जब हुआ तन्मय,
पञ्च तत्त्वी तन हो गया चिन्मय॥

228 बी, विजयभवन, सिविल लाइन्स, कोटा-324001

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शंका-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

शंका-समाधान ''जिनभाषित'' का स्थायी स्तम्भ है। इसमें पं. रतनलाल जी बैनाड़ा जिज्ञासुओं की जैन सिद्धान्त से सम्बन्धित शंकाओं का समाधान करते हैं। जिज्ञासु अपनी शंकाएँ उनके पास भेज सकते हैं।

प्रश्न- भगवान की मूर्ति के ऊपर तीन छत्र किस प्रकार लगने चाहिए?

उत्तर- भगवान की मूर्ति के ऊपर लगाये जाने वाले तीन छत्रों में सबसे बड़ा छत्र सबसे नीचे, बीच का छत्र बीच में और सबसे छोटा छत्र सबसे ऊपर लगाया जाना चाहिए। जितनी भी प्राचीन मूर्तियाँ आज से लगभग 1000 वर्ष या उससे पुरानी हैं, जो पाषाण पर अष्ट प्रतिहार्य सहित निर्मित हैं उन सबमें इसी प्रकार तीन छत्र दिखाई देते हैं। कुन्दकुन्द श्रावकाचार में छत्र लगाने का कथन इस प्रकार है-

छत्रत्रयं च नासोत्तारि सर्वोत्तमं भवेत्। नासा भालं तयोर्मध्यं कपोले वेधकृत भवेत्।।

अर्थ- शिर पर सर्वोत्तम तीन छत्र हों जो नासा के अग्रभाग में उतारवाले न हों, अर्थात् नासिका के समान ऊपर से नीचे की ओर वृद्धिंगत हों। उनका विस्तार नासिका, ललाट उनका मध्य भाग और दोनों कपोल के विस्तार के अनुरूप होना चाहिए।

भावार्थ- जिनमूर्ति के मस्तक, कपाल, कान और नाक के ऊपर बाहर की ओर निकले हए तीन छत्र होने चाहिए।

उपर्युक्त प्रमाण से यह स्पष्ट है कि सबसे बड़ा छत्र सबसे नीचे, मझोला छत्र बीच में और सबसे छोटा सबसे ऊपर होना चाहिए। अधिकांश मंदिरों में इसके विपरीत अर्थात् सबसे छोटा सबसे नीचे, मध्यम बीच में और सबसे बड़ा सबसे ऊपर लगा दिखाई देता है जो उचित नहीं है। हमें आशा है कि इस समाधान को पढ़कर उन सभी मंदिरों के पदाधिकारीगण तीन छत्रों को उपर्युक्त प्रकार से ठीक कर लेंगे।

प्रश्न- क्या सर्वार्थसिद्धि से चयकर मनुष्य गति को प्राप्त सभी देव अवधि ज्ञान सहित होते हैं?

उत्तर- श्री धवला टीका (6/500) में कहा गया है - ''सव्वट्ठसिद्धि विमाणवासियदेवा देवेहि चुदसमाणा..एक्कं हि मणुस गदिमागच्छंति। मणुसेसु उववण्णल्लया मणुसा तेसिमाभिविबोहियणाणं सुदणाणं ओहिणाणं च णियमा अत्थि... केवलणाणं णियमा उप्पाएंति... संजमं णियमा उप्पाएंति॥''

अर्थ- सर्वार्थसिद्धि विमानवासी देव, देव पर्याय से च्युत होकर एक मनुष्य गति को ही प्राप्त होते हैं। मनुष्य गति में उत्पन्न उन मनुष्यों के नियम से मतिज्ञान, श्रुतज्ञान व अवधिज्ञान होते हैं। वे नियम से केवलज्ञान को उत्पन्न करते हैं तथा नियम से संयम को प्राप्त होते हैं।

प्रश्न- सप्तम गुण स्थान की दो अवस्थायें कही गयी हैं : स्वस्थान अप्रमत्त तथा सातिशय अप्रमत्त। इनमें क्या शुद्धोपयोग सातिशय अप्रमत्त में ही होता है, या दोनों में?

उत्तर- अशुभोपयोग, शुभोपयोग व शुद्धोपयोग का गुणस्थानपरक वर्णन प्रवचन सार गाथा 9 की तात्पर्यवृत्ति तथा बृहद्द्रव्य संग्रह की टीका में आता है जिसके अनुसार प्रथम तीन गुणस्थानों में तारतम्य से अशुभउपयोग, बाद के तीन गुणस्थानों में अर्थात् चौथे से छठे गुणस्थान में तारतम्य से शुभोपयोग तथा सातवें से बारहवें गुणस्थान तक छह गुणस्थानों में तारतम्य से शुद्धोपयोग है। इसके अनुसार तो सप्तम गुणस्थान में शुद्धोपयोग होता है परन्तु इन्हीं आ. जयसेन ने समयसार गाथा 14 की टीका में कहा है- 'शुभोपयोगे प्रमत्ताप्रमत्तसंयतापेक्षया'' (अर्थात् प्रमत्त और अप्रमत्त संयतों की अपेक्षा शुभोपयोग में)। इससे यह स्पष्ट होता है कि सप्तम अप्रमत्त गुणस्थान में शुभोपयोग भी होता है। अब प्रश्न यह है कि अप्रमत्त विरत गुणस्थान की उपर्युक्त दो अवस्थाओं में से अर्थात् स्वस्थान और सातिशय में से शुद्धोपयोग किसमें माना जाए? आ. विरागसागर जी ने अपनी पुस्तक शुद्धोपयोग में स्वस्थान अप्रमत्त गुण वाले को भी शुद्धोपयोगी कहा है। यदि ऐसा माना जाये तो समयसार गाथा 14 की टीका में आ. जयसेन द्वारा कहे गये उपर्युक्त कथन (अप्रमत्त विरत में शुभोपयोग भी होता है) के साथ सामंजस्य नहीं बैठता। वर्तमान में कुछ विद्वानों ने अपने लेखों में सातिशय अप्रमत्तविरत से शुद्धोपयोग माना है। वे विद्वान् स्वस्थान अप्रमत्तविरत में शुद्धोपयोग स्वीकार नहीं करते। ऐसे कई विद्वानों से जब इस प्रसंग पर चर्चा हुई तो वे कोई आगम प्रमाण भी नहीं दे पाते हैं। फिर भी यदि ऐसा माना जाये कि शुद्धोपयोग का प्रारंभ सातिशय अप्रमत्त से ही होता है तब सातिशय अप्रमत्त तो मात्र श्रेणी आरोहण करने वाले मुनियों के ही होता है जिनका वर्तमान में एकदम अभाव है अर्थात् पंचम काल में श्रेणी आरोहण नहीं होता, तो वर्तमान के समस्त साधुओं में शुद्धोपयोग का अभाव मानना पड़ेगा। जो आगमसम्मत प्रतीत नहीं होता क्योंकि आगम में ऐसा कोई प्रमाण देखने में नहीं आता।

अतः ऐसा मानना उचित प्रतीत होता है कि स्वस्थान अप्रमत्त में, शुद्धोपयोग व शुभोपयोग दोनों होते हैं तथा सातिशय अप्रमत्त में मात्र शुद्धोपयोग ही होता है। विद्वानों से निवेदन है कि उपर्युक्त विषय को और स्पष्ट करें।

प्रश्न- अकाल मरण का क्या स्वरूप है? निश्चयनय से अकाल मरण होता है या नहीं?

उत्तर- आयुकर्म के क्षय होने को मरण कहते हैं (श्री धवल पु. 1/234) आयुकर्म की स्थिति पूर्ण होने से पूर्व ही विशेष कारणवश आयुकर्म की उदीरणा होकर क्षय हो जाने को अकाल मरण कहते हैं। आ. उमास्वामी ने तत्त्वार्थ सूत्र (अ. 2/53) में लिखा है- औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोनपवर्त्यायुषः।

अर्थ- उपपाद जन्म वाले देव और नारकी, चरमोत्तम शरीर वाले अर्थात् तद्भवमोक्षगामी जीव और असंख्यात वर्ष की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुवाले अर्थात् भोगभूमियाँ जीवों का अकाल मरण नहीं होता। इसी सूत्र की सामर्थ्य से यह भी सिद्ध होता है कि इनके अतिरिक्त अन्य संसारी जीवों का अकाल मरण हो सकता है।

तत्त्वार्थ सूत्र 2/53 की सुख बोधा-टीका में इस प्रकार कहा गया है "तेभ्योऽन्ये तु संसारिणः सामर्थ्यादपवर्त्यायुषोपी भवन्तीति गम्यते"

अर्थ- उक्त जीवों को छोड़कर शेष संसारी अपवर्तन-आयुष्क होते हैं (उनका अकाल मरण भी संभव है) ऐसा सामर्थ्य से ज्ञात होता है। श्लोकवार्तिक टीका में भी इस प्रकार कहा है- 'कर्मभूमियाँ मनुष्यों व तिर्यचों का मरण यदि विष, शस्त्र आदि बाह्य विशेष कारणों से होता है तो उनका अकाल मरण होता है। वह मृत्युकाल व्यवस्थित न होकर विषशस्त्र आदि की सापेक्षता से उत्पन्न हो जाता है। उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि जो मरण बँधी हुई आयु को पूर्ण भोगने से पूर्व ही किन्हीं बाह्य कारणों से हो जाता है उसे अकाल मरण कहते हैं। जैसे किसी ने 100 वर्ष की मनुष्य आयु पायी है, यदि किसी बाह्य कारणवश वह 100 वर्ष से पूर्व मरण को प्राप्त हो जाता है तो उसे अकाल मरण कहा जाता है।

कुछ विद्वानों का मत है कि इस समय से पूर्व मरण को सर्वज्ञ देव ने पहले से ही जान लिया था। अतः सर्वज्ञ की दृष्टि में तो इसे कालमरण ही मानना चाहिए, अकाल मरण नहीं। उन विद्वानों का ऐसा मानना उचित नहीं है। यद्यपि यह सत्य है कि समय से पूर्व होने वाले मरण को भी सर्वज्ञ ने इसी रूप में देखा है। परन्तु उनके देखने में भी यह मरण अकालमरणरूप से ही देखा गया है क्योंकि ऐसा मरण उपर्युक्त परिभाषाओं के अनुसार अकाल मरण के अन्तर्गत ही आता है और उपर्युक्त परिभाषाएँ आगमवचन अर्थात् सर्वज्ञवचन ही तो हैं। सर्वज्ञ देव भी तो अकालमरण को अकालमरण के रूप में ही जानेंगे। अतः समय से पूर्व मरण अकाल मरण ही है।

कुछ विद्वान ऐसा भी कहते हैं कि अकालमरण व्यवहार नय से होता है, निश्चय नय से नहीं। निश्चय नय से तो वह काल मरण है। उन विद्वानों की ऐसी धारणा ठीक नहीं है। ललितपुर में श्री षट्खण्डागम की जो वाचना पूज्य आ. विद्यासागर जी महाराज के सान्निध्य में हुई थी उसमें प्रकरणवश पं. फूलचन्द जी सिद्धान्त शास्त्री ने इसी बात का उल्लेख किया था कि निश्चयनय की दृष्टि में अकाल मरण नहीं होता। तब पू. आ. श्री ने उत्तर दिया था- "प. जी निश्चयनय की दृष्टि में तो मरण ही नहीं होता।"

यदि वास्तव में अकालमरण घटित नहीं है तो आ. उमास्वामी जी तत्त्वार्थ सूत्र 2/53 में इसका वर्णन क्यों करते। अकाल मरण नहीं मानने से उनका सूत्र निरर्थक सिद्ध होता है जो कदापि संभव नहीं है। श्री श्रुतसागर सूरि ने तत्त्वार्थवृत्ति में लिखा है- 'अन्यथा दया-धर्मोपदेशचिकित्साशास्त्रं च व्यर्थं स्यात्।'

अर्थ- अकाल मरण न मानने से दयाधर्म का उपदेश और चिकित्सा शास्त्र व्यर्थ हो जावेंगे.

आ.- कुन्द कुन्द ने भाव पाहुडगाथा 25 में ऐसा कहा है-

विसवेयणरत्तक्खयसत्थग्गहणसंकिलेसेणं।
आहारुस्सासाणं णिरोहणा खिज्जाए आऊ।।

अर्थ- विषभक्षण, वेदना, रक्तक्षय, भय, शस्त्र, संक्लेश, आहारनिरोध, उच्छ्वास निरोध, इन कारणों से आयु का क्षय होकर अकाल मरण हो जाता है।

अतः उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार अकाल मरण की व्याख्या माननी चाहिए।

प्रश्न- 'पूजन पाठ प्रदीप' की ऋषिमंडल पूजा में पृष्ठ 233 और 234 पर जो देवी-देवताओं को अर्घ्य चढ़ाने का विधान है, वह उचित है या अनुचित?

उत्तर- पृष्ठ 234 में पहला अर्घ्य इस प्रकार है-

दसदिश दस दिग्पाल, दिशा नाम सो नाम वर।
तिन गृह श्री जिनआल, पूजों मैं वन्दों सदा।।

अर्थ- दसों दिशाओं में उसी दिशा के नाम वाले दस दिग्पाल हैं, उनके निवास स्थानों में जो जिनेन्द्र भगवान के जिन मन्दिर हैं उनकी मैं सदा पूजा करता हूँ। इसका अर्घ्य किताब में छपा है वह गलत है, उसकी जगह ऐसा बोलना चाहिए "ऊँ ह्रीं दशदिग्पालविमानसम्बन्धि जिनालयोभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।"

इसके अलावा पृष्ठ 233 पर 'श्री देवी प्रथम बखानी' तथा पृष्ठ 234 पर 'ऋषि मंडल शुभ यंत्र के' ये दो छन्द तथा उनके जो अर्घ्य दिये हैं, वे उचित नहीं हैं। इन देवी देवताओं को, जो जिनभक्त होते हुए भी असंयमी हैं, अर्घ्य चढ़ाना किसी प्रकार भी उचित नहीं कहा जा सकता। मंदिर जी में तो केवल नवदेवता (पंचपरमेष्ठी, जिनवाणी, जिनधर्म जिनमंदिर और जिन बिम्ब) के अलावा अन्य किसी की पूजा नहीं होती। अतः उन देवी-देवताओं की पूजा कदापि करनी योग्य नहीं है। यदि करेंगे तो सम्यक्त्व में दूषण लगेगा।

अतः सभी साधर्मियों से निवेदन है कि पृष्ठ 234 के पहले अर्घ्य को शुद्ध करके पढ़ें और शेष दो अर्घ्यों को कदापि नहीं बोलें।

प्रश्न- क्या सातवें नरक का जीव नरक से निकलकर नियम से सिंह ही होता है? तथा जितने सिंह होते हैं वे सातवें नरक से ही आते हैं? **प्रश्नकर्ता** - पं. राजकुमार जी शास्त्री-बरायठा

उत्तर- सातवें नरक से निकले हुए जीव गर्भज कर्मभूमिज संज्ञी एवं पर्याप्तक तिर्यंच ही होते हैं, अन्य नहीं। जैसा कि तिलोयपण्णत्ति अधिकारी 2/290 में कहा गया है-'तिरियं चिय चरम पुढविदो।'

श्री राजवार्तिक भाग-1 पृष्ठ 168 में कहा है- "सप्तम्यां नारका मिथ्यादृष्टयो नरकेभ्यः उदवर्तिता एकामेव तिर्यग्गतिमायान्ति तिर्यक्ष्वायाताः पञ्चेन्द्रियगर्भजप्रयाप्तकसंख्येय वर्षायुषूत्पद्यन्ते नेतरेषु।"

अर्थ- सातवें नरक से मिथ्यादृष्टि नारकी निकलकर एक तिर्यंच गति में आते हैं, तिर्यंचो में आकर पञ्चेन्द्रिय, गर्भज, पर्याप्तक संख्यात वर्ष की आयु वालों में ही उत्पन्न होते हैं, अन्य में नहीं।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि सातवें नरक से निकला जीव कर्मभूमिज पञ्चेन्द्रिय, सैनी गर्भज पर्याप्तक तिर्यंच बनता है, मात्र सिंह बनने का नियम नहीं है।

सभी सिंह सप्तम नरक से ही आते हैं इस प्रश्न के समाधान में हमको भगवान महावीर के पूर्व भव देखने चाहिए। भ. महावीर के जिन पूर्व 34 भवों का वर्णन मिलता है उसमें वे 23 वें भव में पहले नरक के नारकी थे। वहाँ से आकर चौबीसवें भव में पुनः सिंह बने। इस उदाहरण से यह स्पष्ट है कि सभी सिंह सातवें नरक से आते हों ऐसा नियम नहीं है। आगम के अनुसार तो चारों गतियों से चयकर आये हुए जीवों का सिंह बनने में कोई विरोध दृष्टिगोचर नहीं होता।

1/205, प्रोफेसर्स कालोनी
आगरा- 282002 (उ.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या आप भी हैं 'वेजिटेरियन'

डॉ. राजीव अग्निहोत्री

मांसाहार को हर तरह से हानिप्रद बताते हुए आहार-विशेषज्ञ शाकाहार के गुणों को तमाम तथ्यों के साथ सामने रखते हैं और कहते हैं कि शाकाहार से कई बीमारियों से बचा जा सकता है। साथ ही शाकाहारी चीजों में विटामिन, मिनरल्स, प्रोटीन, रेशे, शर्करा आदि भरपूर होते हैं, जो हमें सेहतमंद जीवन प्रदान करते हैं....

कुछ तथ्य कुछ आँकड़े

- मांसाहार के कारण पानी की काफी बर्बादी होती है। हर बड़े कसाईखाने में लगभग 48 करोड़ लीटर पानी खर्च किया जाता है।
- एक पौंड मांस उत्पादन में ढाई हजार गैलन पानी खर्च होता है।
- कसाईघरों और पशुपालन केन्द्रों से जो दूषित पानी, खून व गंदगी निकलती है, उनमें हानिकारक नाइट्रेट्स, परजीवी, प्रतिजीवी, हेवी मेटल्स व कीटनाशक दवाएँ मौजूद होती हैं।
- मांसाहारी व्यंजनों में अगर चार हजार गैलन पानी लगता है, तो उसी मात्रा में बने शाकाहारी व्यंजनों में मात्र आठ सौ गैलन पानी खर्च होता है।

शायद आप यह नहीं जानते कि देश के सर्वाधिक लोकप्रिय फिल्मी सितारे अमिताभ बच्चन पूरी तरह वेजिटेरियन हैं। शायद आपको यह भी नहीं मालूम होगा कि फिल्म जगत की चर्चित अभिनेत्री जूही चावला, महिमा चौधरी तथा सुप्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी अनिल कुंबले भी मांसाहार नहीं करते। शायद यह बात भी आपकी जानकारी में न हो कि सिर्फ ये भारतीय हस्तियाँ ही नहीं, बल्कि विश्व के कई नामी-गिरामी लोग पूर्णतः वेजिटेरियन हैं। म्यूजिक लीजेंड सर पॉल मैक्कॉर्टिनी, पूर्व टेनिस खिलाड़ी मार्टिना नवरातिलोवा, अभिनेत्री पामेला एंडरसन, किम बेसिंजर, एलिसिया सिल्वरस्टोन, जेक्विन फिनिक्स, अभिनेता रिचर्ड गेयर, ब्रायन एडम्स आदि उन हस्तियों की लम्बी-चौड़ी सूची के चंद नाम हैं, जो मांसाहार करना पसंद नहीं करते। दरअसल बीते कुछ सालों में लोग बड़ी तेजी से शाकाहार की ओर आकर्षित हुए हैं। इस तथ्य को अमेरिका की अव्वल दर्जे की आहार पत्रिका 'बॉन एपिटिट' की एक रिपोर्ट भी सामने लाती है, जिसमें स्पष्ट कहा गया है कि 'हाल ही के कुछ सालों में लोगों का रुझान वेजिटेरियन खाने की ओर अधिक बढ़ा है।

वैसे मांसाहार नहीं करने के लोगों के अपने-अपने तर्क हैं। कुछ मांस को हाइजिनिक नहीं मानने के कारण इससे दूर हैं, तो कुछ जानवरों के प्रति अपनी दया अथवा धार्मिक आस्था के चलते। मिस वर्ल्ड व मिस यूनिवर्स के लिए मनमोहक गाउन बनाकर विश्व भर में चर्चित हुए प्रसिद्ध फैशन डिजाइनर हेमंत त्रिवेदी भी जानवरों के प्रति अपने प्रेम के कारण मांसाहार से कोसों दूर हैं। उन्हीं के शब्दों में कहें तो 'कमजोर और सताए हुए जानवरों का बासी मांस खाना कोई फैशन की बात नहीं है, इसीलिए मैं तो शाकाहार ही पसंद करता हूँ।' हेमंत का जानवर प्रेम सिर्फ दिखावा भर नहीं है, बल्कि जानवरों के प्रति अपने प्यार के कारण ही उन्होंने शाकाहार को बढ़ावा देने के लिये 'पीटा इंडिया (पीपुल्स फॉर द इथिकल ट्रीटमेंट ऑफ एनीमल) के एक विशेष एड-कैंपेन हेतु सब्जियों से बनी आकर्षक ड्रेसें भी तैयार की थीं। हेमंत की ही तरह प्रसिद्ध मॉडल जॉन अब्राहम भी जानवरों के प्रति अपनी दया और प्रेम के चलते मांस को हाथ तक नहीं लगाते। जॉन के अनुसार, 'जानवरों के प्रति अपना प्यार दिखाने और उनकी मदद करने के लिये शाकाहार सबसे अच्छा उपाय है। फिर एक महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि यह मुझे हमेशा फिट रखता है।' जानवरों के प्रति दया और प्रेम रखने वालों के अलावा एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा भी है, जो मांस को हाइजिनिक नहीं मानता और इसलिए 'अपने स्वास्थ्य की चिंता' उन्हें मांसाहार से दूर रखती है। दुनिया के कई जाने-माने आहार विशेषज्ञ भी मानते हैं कि मांसाहारी लोगों की तुलना में शाकाहारी ज्यादा स्वस्थ होते हैं। कारण यह कि मांस से बने सभी व्यंजनों में फैट और कोलेस्ट्राल भारी मात्रा में होता है, जिससे दिल का दौरा, कैंसर, स्ट्रोक या अन्य बीमारियाँ हो सकती हैं। जो लोग ऐसे उत्पादों का सेवन करते हैं उन्हें मोटापा, अपेंडिसाइटिस, आर्थराइटिस, डायबिटीज और फूड पाइजनिंग का भी खतरा रहता है।

अमेरिका की यूनिवर्सिटी आफ कैलिफोर्निया के डॉक्टर डीन आर्निश मांसाहार से उपर्युक्त बीमारियाँ होने के अलावा पैरालिसिस होने की बात भी करते हैं। उनके अनुसार मांस, अंडे और दूध से बनी चीजों का आहार इन बीमारियों का कारक है। इसके अलावा मछली में पारे की अधिकता तथा अन्य तत्त्व कैंसर पैदा करने वाले होते हैं। इसी तरह अमेरिका की कॉर्नेल यूनिवर्सिटी के डॉ. टी. कॉलिन द्वारा इस संबंध में काफी शोध के बाद बनाई गई रिपोर्ट का सार भी यही है कि 'शाकाहार द्वारा कैंसर के साथ ही दिल तथा शरीर को कमजोर करने वाले रोगों को रोका जा सकता है।' आपको आश्चर्य में डाल देने वाली एक और बात, कई डॉक्टर तो दूध के सेवन को भी तमाम बीमारियों का कारण बताते हैं। पूर्व अमेरिकन राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के स्वास्थ्य सलाहकार डॉ. जान मैक्डूगल तो जानवरों के दूध को सीधे 'लिक्विड मीट' की संज्ञा दे देते हैं, क्योंकि उनके अनुसार एनीमल फैट के कारण यह स्वास्थ्य के लिए उतना ही हानिकारक है, जितना कि जानवरों का मांस।

मांसाहार को तमाम तरह से हानिप्रद बताते हुए यही विशेषज्ञ शाकाहार के गुणों को तमाम तथ्यों के साथ सामने रखते हुए कहते हैं कि शाकाहारी भोजन में फैट की मात्रा बहुत कम होती है और कोलेस्ट्राल भी न के बराबर, जिससे आदमी कई बीमारियों से बचा रहता है। साथ ही शाकाहारी चीजों में विटामिन, मिनरल्स, प्रोटीन व फाइबर्स आदि तो भरपूर होते है, जो आदमी को सेहतमंद जीवन प्रदान करने में सहायक होते हैं।

दैनिक भास्कर, जबलपुर
15 जुलाई 2001 से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बढ़ता गोवध और प्रदूषित होता दूध

डॉ. श्रीमती ज्योति जैन

अधिकांश जनप्रतिनिधि शाकाहारी हैं। यदि हम सब दबाव बनायें तो सरकार को अपनी पशुवध एवं मांसनिर्यात संबंधी नीति के बारे में सोचना ही पड़ेगा। सभी शाकाहारी मिलकर एक ऐसा जनआन्दोलन चलायें कि आम आदमी भी शाकाहार के सम्बन्ध में जान सके और सरकार भी इससे प्रभावित हो। आचार्य श्री विद्यासागर जी का यह कथन कि 'हिंसा का उद्योग देश में हिंसा ही फैलायेगा अहिंसा नहीं' शायद सरकार की समझ में आ सके।

भारतीय संस्कृति 'जियो और जीने दो' के मूलमंत्र पर आधारित है। प्रकृति का अपने आप ही एक संतुलन है। संतों-महापुरुषों ने इस संतुलन को धर्म का ही एक रूप माना है। 'गाय' हमारी सामाजिक/धार्मिक/ आर्थिक व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु रही है। प्रारंभ से ही हमारी संस्कृति में घर में गाय का होना सम्पन्नता का प्रतीक माना गय है। घरेलू पशु परिवार का ही एक हिस्सा होते थे और इनके पालन-पोषण की जिम्मेवारी परिवार में ही निहित थी। वर्षों तक विदेशियों के आक्रमण एवं लम्बे समय तक गुलाम रहने के बाद अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवर्तन हुए पर गाय की महिमा यथावत रही।

अंग्रेजों द्वारा गो-मांसभक्षण को बढ़ावा देने के कारण गो-भक्तों को ठेस पहुँची थी, सामान्य जन की भावनाएँ आहत हुईं। इतिहास गवाह है, हमारे प्रथम स्वाधीनता आंदोलन 1857 का एक कारण गाय की चर्बी से निर्मित कारतूस थे। अंग्रेजों ने जब गो-वध को बढ़ावा दिया तो पूरा राष्ट्र गो-रक्षा के लिये संकल्पबद्ध हो गया था, अनेक लोगों को अपना बलिदान भी देना पड़ा था तभी प्रत्येक शहर में गो-रक्षा के लिये गोशालाओं की नींव पड़ी। महात्मा गाँधी भी गोरक्षा में सदैव आगे रहे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे संविधान में भी व्यवस्था की गयी कि जीवों की रक्षा करना हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य है। प्रत्येक नागरिक प्रकृति का संरक्षण करे एवं जीवों पर दया रखे। संविधान धारा 51 (ए-जी) में कहा गया है- प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी, और जीव जन्तु हैं, रक्षा की जायेगी पर अभी अधिक वर्ष नहीं हुए संविधान को क्रियान्वित हुए कि हम स्वतंत्र देश के नागरिक अपने स्वार्थ के लिये पशुओं का अंधाधुंध वध करने में लग गये हैं और उनके मांस का निर्यात कर रहे हैं। विदेशी मुद्रा का लालच रोज लाखों पशुओं को मौत के घाट उतार रहा है और हमारी अमूल्य पशु-सम्पदा को विनाश के कगार पर ले जा रहा है। कल्पना भी नहीं की गयी थी कि 21वीं सदी आते-आते सभ्य समाज इतना हिंसक हो जायेगा जितना कि वह अपनी असभ्य अवस्था में भी नहीं था। भगवान महावीर, महात्मा गाँधी जैसे अहिंसावादी चिंतकों का देश अपनी समृद्धशाली परम्परा को चूरचूर होते देख रहा है। मांसाहारियों के नाम पर, प्रयोगशालाओं के नाम पर और न जाने किस-किस के लिये जीवों का निरन्तर हनन किया जा रहा है। कृमिकीटों से लेकर विशालकाय जीव तक मानवीय हिंसा का शिकार हो रहे हैं।

हमारी पशु-आधारित अर्थव्यवस्था को तहस-नहस किया जा रहा है। पड़ोसी देशों में भी पशु सम्पदा समाप्त होने की स्थिति में है, इसी कारण अवैध रूप से पशुओं की तस्करी भी हो रही है। भारतीय गायों की अनेक नस्लें समाप्त हो गयी हैं, अनेक समाप्ति की कगार पर हैं और अनेक नस्लों को दूषित कर दिया गया है। प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है, इसी कारण प्रकृति का प्रकोप भी बढ़ता जा रहा है।

बढ़ते हुए गोवध से दूध जैसे पौष्टिक खाद्य पदार्थ से देश की सामान्य जनता वंचित हो रही है। दूध एक पौष्टिक आहार है। स्वास्थ्यविशेषज्ञों ने इसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेड, कैल्शियम, फॉस्फोरस आदि पोषक तत्त्वों से युक्त बताया है पर विडम्बना यह है कि दूध की नदियाँ बहाने वाले हमारे देश का दूध ही प्रदूषित हो गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में दूध विक्रेता गंदा पानी मिलाते देखे गये हैं, यह दूध अनेक संक्रामक रोगों को जन्म देता है। व्यापारी भी दूध को अधिक समय तक संरक्षित रखने के लिये यूरिया कास्टिक, रीठा-पाउडर, पैराफिन आदि रसायनों का प्रयोग करने लगे हैं। इससे भी आगे बढ़कर अधिक से अधिक धन कमाने की होड़ में कृत्रिम दूध भी बनाने लगे हैं। यूरिया, डिटर्जेन्ट, सफेद कैस्टर आयल, तरल ग्लूकोन, हाइड्रोजन ऑक्साइड, फार्मोलिन आदि रसायनों को मिलाकर कृत्रिम दूध बनाया जा रहा है जो देखने तथा स्वाद में सामान्य दूध-जैसा ही है पर यह विषैला दूध स्वास्थ्य के लिये अत्यंत घातक है। इससे जिगर, आंत तथा गुर्दों को क्षति पहुँचती है। दूध में घातक रसायनों की मिलावट एवं सिंथेटिक दूध ने दूध को तो प्रदूषित किया ही, हमारे मानवीय नैतिक मूल्यों के सभी मानदण्ड तोड़ दिये हैं जो हमारे सामाजिक एवं राष्ट्रीय चरित्र की गिरावट की ओर संकेत है।

मानवीय नैतिक मूल्यों के पतन की पराकाष्ठा सिन्थेटिक दूध तक ही नहीं है, वरन् गाय-भैंस के बच्चे मर जाने पर इन्जेक्शन द्वारा दूध निकाला जा रहा है। पशुओं का दूध दुहने से पहले उन्हें आक्सोलिटिन एवं पिपिटियुरिन नामक दवाओं का इन्जेक्शन लगाया जाता है। यह दूध स्वास्थ्य के लिये गंभीर खतरा है। नियमित इन्जेक्शन से दूध में पशुओं के खून और हड्डियों के तत्त्व आने लगते हैं। इंसानी क्रूरता की ऐसी मिसाल कहाँ मिलेगी? प्रदूषित दूध और उससे बने सभी पदार्थ गंभीर बीमारियों को जन्म दे रहे हैं। इस तरह की अनेक बीमारियाँ सामने आ रही हैं कि डाक्टर भी नहीं समझ पा रहे हैं। विचार करें! हम लालच के वशीभूत होकर आगे आने वाली पीढ़ी के स्वास्थ्य को कैसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सँवारेंगे।

पूरे विश्व में इन असहाय, बेजुबान जीवों पर संकट मँड़रा रहा है। अभी अधिक दिन नहीं हुए जब ब्रिटेन में लाखों गायों को पागल बताकर मौत के घाट उतार दिया गया था। बाद में परीक्षण से पता चला कि शाकाहारी गाय को उसकी ही प्रजाति का मांस चारे में मिलाकर खिलाया गया, जिससे वह संक्रामक हो गयी। सच पूछो तो पागल गाय नहीं वरन् वे मांस उद्योगी हैं जिन्होंने अधिक से अधिक मुनाफा कमाने की होड़ में गाय को ही विकृत कर दिया। अभी हाल में अफगानिस्तान में तालिबान आतंकवादियों ने अपनी अनोखी जिद पूरी करने के लिये सौ गायों की अकारण बलि चढ़ा दी। यूरोप और अमेरिका में फैली मुँह और खुर की बीमारी से ग्रस्त पशुओं को खत्म किया जा रहा है। बीमारी की आशंका मात्र से ही लाखों पशुओं का वध किया जा रहा है। इससे लगता है कि मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी कर सकता है।

भूमंडलीकरण और विश्वव्यापार ने खुली आयात नीति को बढ़ावा दिया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भारत में 'नानवेज रेस्टोरेंट' खोलने से हमारे यहाँ भी अनेक प्रकार के खतरे मँड़राने लगे हैं। यहाँ तक कि विदेशी कसाईघरों का अवशिष्ट भी यहाँ आ रहा है। हमारे यहाँ भी पशुओं के रोगग्रस्त होने की संभावना है। अभी समाचार पत्रों में राजस्थान, हरियाणा आदि में मुँह और खुर की बीमारी से ग्रस्त पशु पाये गये। विदेशी दूध भी बाजार में आने को तैयार है।

अतः आज के परिप्रेक्ष्य में आवश्यक है कि हम जागरूक बनें। जैन ही नहीं, वरन् सभी शाकाहारी समुदाय के लोग मिलकर अपनी आवाज बुलंद कर संसद तक पहुंचायें। अधिकांश जन प्रतिनिधि शाकाहारी हैं। यदि हम सब दबाव बनायें तो सरकार को अपनी मांस निर्यात एवं पशुवधसंबंधी नीति के बारे में सोचना ही पड़ेगा। सभी शाकाहारी मिलकर एक ऐसा जन आंदोलन चलायें कि एक आम आदमी भी शाकाहार के संबंध में जान सके और सरकार भी इससे प्रभावित हो। आचार्य श्री विद्यासागर जी का यह कथन कि 'हिंसा का उद्योग देश में हिंसा ही फैलायगा अहिंसा नहीं' शायद सरकार की समझ में आ सके।

गोशाला के माध्यम से भी हम गायों का संरक्षण कर सकते हैं। आचार्यश्री विद्यासागर जी के मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद से जगह-जगह गोशालाएँ स्थापित हो रही हैं। स्थानीय स्तर पर भी हम सभी के प्रयासों से यह सफलता प्राप्त हो सकती है। हाल ही में राजस्थान के अकालग्रस्त क्षेत्र से साधु वर्ग के आशीर्वाद से बहुत सा पशुधन बचाया जा सका है। समाचार पत्रों में हम समाचार पढ़ते ही रहते हैं। सच भी है, यदि हम प्रयास करें तो क्या कुछ संभव नहीं है।

आइए, 2600वें महावीर जन्म जयन्ती के पुनीत पर्व पर, जो कि 'अहिंसा वर्ष' के रूप में मनाया जा रहा है, हम संकल्प लें कि हम प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखते हुए उनके संरक्षण के लिये कुछ भी कर-गुजरने के लिये तैयार रहेंगे।

6, शिक्षक आवास, जैन डिग्री कालेज, खतौली (उ.प्र.)

भजन

कविवर दौलतराम

जय श्री वीर जिनेन्द्र-चन्द्र, शत इन्द्र-वंद्य जगतारं॥
सिद्धारथ-कुल-कमल अमल रवि, भव-भूधर पवि भारं।
गुन-मुनि-कोष अदोष मोखपति, विपिन-कषाय-तुषारं॥
मदन-कदन शिव-सद्न पद नमित, नित अनमित यति सारं।
रमा-अनन्त-कन्त अन्तक-कृत-अन्त जन्तु-हितकारं॥
फन्द चन्दना कन्दन दादुर, दुरित तुरित निर्वारं।
रुद्ररचित अतिरुद्र उपद्रव, पवन अद्रिपति सारं॥
अन्तातीत अचिन्त्य सुगुन तुम, कहत लहत को पारं।
हे जगमौल! 'दौल' तेरे क्रम, नमें शीश कर धारं॥

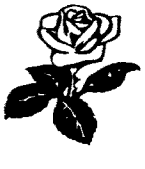

अर्थ

सौ इन्द्रों द्वारा वन्दनीय और जगत को तारने वाले श्री महावीर जिनेन्द्र रूपी चन्द्रमा जयवन्त रहें।

वे राजा सिद्धार्थ के कुलरूपी स्वच्छ कमल के लिये सूर्य हैं, संसाररूपी पर्वत के लिये मजबूत वज्र हैं, गुणरूपी मणियों के भण्डार है, निर्दोष मोक्ष के स्वामी हैं और कषायरूपी जंगल के लिये बर्फ के समान हैं।

वे कामदेव को नष्ट करने वाले हैं और कल्याण के घर हैं। उनके चरणों में नित्य अगणित श्रेष्ठ यति नमस्कार करते हैं। वे अनन्त लक्ष्मी के पति हैं, मृत्यु का अन्त करने वाले हैं और प्राणिमात्र के हितकारी हैं।

उन्होंने चन्दना के बन्धनों को काटा है और मेंढक के पापों को तुरन्त नष्ट किया है। रुद्र द्वारा किये गये महाभयंकर उपद्रवरूपी पवन के समक्ष वे श्रेष्ठ पर्वतराज हैं।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे जगत-शिरोमणि महावीर जिनेन्द्र! आपके सुगुण अनन्त और आचिन्त्य हैं। उन्हें कहने में कौन पार पा सकता है? मैं आपके चरणों में हाथ जोड़कर मस्तक झुकाता हूँ।

प्रस्तुति : शुद्धात्म प्रकाश जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारीलोक

जैन संस्कृति एवं साहित्य का मुकुटमणि-कर्नाटक और उसकी कुछ ऐतिहासिक श्राविकाएँ

प्रो. (डॉ.) श्रीमती विद्यावती जैन

प्रो. (डॉ.) श्रीमती विद्यावती जैन जैनजगत् की जानी-मानी विदुषी हैं। ये प्रसिद्ध विद्वान् प्रो. (डॉ.) राजाराम जी जैन की सहधर्मिणी हैं। श्रीमती विद्यावती जी लेखनकार्य में अपने पतिश्री के साथ ही साथ चल रही हैं। उनके अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। पत्रिकाओं में उनके लेख भी प्राय: प्रकट होते रहते हैं। प्रस्तुत लेख में उन्होंने कर्नाटक की ऐतिहासिक श्राविकाओं के यशस्वी जीवन को उद्घाटित किया है। इसे 'जिनभाषित' में क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है।

कर्नाटक प्रदेश भारतीय संस्कृति के लिये युगों-युगों से एक त्रिवेणी संगम के समान रहा है। भारतीय भूमण्डल के तीर्थयात्री अपनी तीर्थयात्रा के क्रम में यदि उसकी चरण-रज वन्दन करने के लिये वहाँ न पहुँच सकें, तो उनकी तीर्थयात्रा अधूरी ही मानी जायेगी। जैन संस्कृति, साहित्य एवं इतिहास से भी यदि कर्नाटक को निकाल दिया जाय तो स्थिति बहुत कुछ वैसी ही होगी जैसे भारत के इतिहास से मगध एवं विदेह को निकाल दिया जाए। यदि दक्षिण के इतिहास से गंग, राष्ट्रकूट एवं चालुक्यों को निकाल दिया जाय, तो स्थिति बहुत कुछ वैसी ही होगी, जैसे मगध से नन्दों, मौर्यों एवं गुप्तों के इतिहास को निकाल दिया जाय।

दक्षिण भारत के जैन इतिहास से यदि पावन नगरी 'श्रवणबेलगोल' को निकाल दिया जाय, तो उसकी स्थिति वैसी ही होगी, जैसी, राजगृही, उज्जयिनी, कौशाम्बी एवं हस्तिनापुर को जैन-पुराण साहित्य से निकाल दिया जाय। जैन इतिहास एवं संस्कृति की एकता, अखण्डता तथा सर्वांगीणता के लिये, कर्नाटक का उक्त सभी आयामों की समान रूप से सहभागिता एवं सहयोग रहता आया है।

यही क्यों? भारतीय-इतिहास की निर्माण-सामग्री में से यदि कर्नाटक की शिलालेखीय एवं प्रशस्तिमूलक सामग्री तथा कलाकृतियों को निकाल दिया जाए, तो स्थिति ठीक वैसी ही होगी, जैसे सम्राट अशोक एवं सम्राट खारवेल की शिलालेखीय पुरातात्त्विक एवं ऐतिहासिक सम्पदा को भारतीय-इतिहास से निकाल दिया जाय।

इसी प्रकार, मध्यकालीन भारतीय सामाजिक इतिहास में से यदि कर्नाटक की यशस्विनी श्राविकाओं के इतिहास को उपेक्षित कर दिया जाय, तो भारत का सामाजिक इतिहास निश्चय ही विकलांग हो जायेगा।

उक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि भारत के बहुआयामी इतिहास के लेखन में कर्नाटक का कितना महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उसके मध्यकालीन राजवंशों ने जहाँ अपनी राष्ट्रवादी एवं जनकल्याणी भावनाओं से अपनी-अपनी राज्य सीमाओं को सुरक्षित रखा और अपने यहाँ के वातावरण को सुशान्त एवं कलात्मक बनाया, वहीं उन्होंने अपनी संस्कृति, सभ्यता, कला एवं साहित्य के विकास के लिये साधकों, चिन्तकों, लेखकों, कलाकारों एवं शिल्पकारों को बिना किसी भेद-भाव के सभी प्रकार की साधन-सुविधाएँ उपलब्ध कराईं, उनके लिये विद्यापीठ, अध्ययन-शालाएँ एवं ग्रन्थागार स्थापित कर जो भी कार्य किये, वे भारतीय परम्परा में आदर्श एवं अनुपम उदाहरण हैं। वहाँ के पुरुष वर्ग ने जो-जो कार्य किये, वे तो इतिहास के अमिट अध्याय हैं ही, वहाँ की महिलाओं के संरचनात्मक कार्य भी अत्यन्त अनुकरणीय एवं आदर्श प्रेरक रहे हैं। चाहे साहित्य-लेखन के कार्य हों, पाण्डुलिपियों की सुरक्षा एवं प्रतिलिपि सम्बन्धी कार्य हों, मंदिर एवं मूर्ति-निर्माण अथवा प्रतिष्ठा-कार्य हों और चाहे प्रशासन सम्बन्धी कार्य हों, वहाँ की जागृत नारियों ने पुरुषों के समकक्ष ही शाश्वत मूल्य के कार्य किये हैं।

आज भारत की राजनैतिक पार्टियाँ भले ही महिलाओं के आरक्षण एवं समानाधिकार के नारे लगाते-लगाते वर्षों तक नारी-समाज को छल-छद्म या शब्दों के चक्रव्यूह में उलझाये रखें, किन्तु कर्नाटक की आदर्श राज्यप्रणाली ने उसे सातवीं-आठवीं सदी से बिना किसी रोक-टोक के समानाधिकार दे रखे थे। कर्नाटक के सामाजिक इतिहास के निर्माण में योगदान करने वाली ऐसी सैकड़ों सन्नारियाँ हैं, जिनकी इतिहास-परक प्रशस्तियाँ वहाँ के शिलालेखों, मूर्तिलेखों एवं स्तम्भ लेखों में अंकित हैं, तथा वहाँ की किंवदन्तियों, कहावतों एवं लोकगाथाओं में आज भी जीवित हैं। किन्तु यह खेद का विषय है कि अभी तक उसका सर्वांगीण सर्वेक्षण एवं मूल्यांकन नहीं हो सका है। उपलब्ध सन्दर्भ-सामग्री में से सभी का यहाँ परिचय दे पाना तो सम्भव नहीं, किन्तु कुछ महिलाओं का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ-

विदुषी कवियित्री कन्ती देवी

कवियित्री कन्ती (सन् 1140 के लगभग) उन विदुषी लेखिकाओं में से है, जिसने साहित्य एवं समाज के क्षेत्र में बहुआयामी कार्य तो किये, किन्तु यश की कामना कभी नहीं की। जो कुछ भी कार्य उसने किया, सब कुछ निस्पृह भाव से।

कन्नड़ महाकवि बाहुबली (सन् 1560) ने अपने 'नागकुमार चरित' में उसकी दैवी-प्रतिभा तथा ओजस्वी व्यक्तित्व की चर्चा की है और बतलाया है कि वह द्वार-समुद्र (दोर समुद्र) के राजा बल्लाल द्वितीय की विद्वत्सभा की सम्मानित विदुषी कवियित्री थी। बाहुबली ने उसके लिये विद्वत्सभा की मंगल-लक्ष्मी, शुभगुणचरिता, अभिनव-वाग्देवी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसी अनेक प्रशस्तियों से सम्मानित कर उसकी गुण-गरिमा की प्रशंसा की है। इन संदर्भों से यह स्पष्ट है कि कन्ती उक्त बल्लालराय की राज्यसभा की गुण-गरिष्ठा सदस्या थी।

महाकवि देवचन्द्र ने अपनी 'राजावलिकथे' में एक रोचक घटना का चित्रण किया है। उसके अनुसार दोरराय ने दोरसमुद्र नामक एक विशाल जलाशय का निर्माण कराया तथा एक ब्राह्मणकुलीन धर्मचन्द्र को अपने मन्त्री के पद पर नियुक्त कर लिया। उस मन्त्री का पुत्र वहीं शिक्षक का कार्य करने लगा। उसकी विशेषता यह थी कि वह ज्योतिष्मती नामकी एक विशिष्ट तैलौषधि का निर्माण भी करता था, जो बुद्धिवर्धक थी। वह मन्दबुद्धिवालों की बुद्धि बढ़ाने के लिये एक खुराक में केवल आधी-आधी बूँद ही देता था लेकिन सभी लोग उसका साक्षात् प्रभाव देखकर आश्चर्य-चकित रहते थे।

कन्तीदेवी भी उस औषधि का सेवन करती थी। एक दिन उसने अवसर पाकर तत्काल ही तीव्रबुद्धिमती बनने के उद्देश्य से एक ही बार में उस दवा का अधिक मात्रा में पान कर लिया। अधिक मात्रा के कारण उसके शरीर में इतनी दाह उत्पन्न हई कि उसे शान्त करने के लिये वह दौड़कर कुएँ में कूद पड़ी। कुआँ अधिक गहरा न था। अतः वह उसी में खड़ी रही। उसी समय उसमें कवित्व शक्ति का प्रस्फुरण हुआ और तार-स्वर से वह स्वनिर्मित कविताओं का पाठ करने लगी। उसकी कविताएँ सुनकर सभी प्रसन्न हो उठे।

जब राजा दोरराय को यह सूचना मिली तो उन्होंने परम विश्वस्त उभयभाषा-कवि अभिनव-पम्प को उसकी परीक्षा लेने हेतु उसके पास भेजा। वहाँ जाकर पम्प ने उससे जितने भी कवित्व-मय प्रश्न किये, कन्ती ने सभी का सटीक उत्तर देकर पम्प को विस्मित कर दिया। दोरराय ने यह सब सुनकर तथा उसकी अलौकिक काव्य प्रतिभा से प्रसन्न होकर उसे तत्काल ही अपनी विद्वत्सभा का सदस्य घोषित किया तथा उसे 'अभिनव वाग्देवी' के अलंकरण से अलंकृत किया। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. आर. नरसिंहाचार्य की मान्यता के अनुसार दोरराय का अपरनाम ही बल्लाल था और उसकी राज्य सभा में महाकवि अभिनव पम्प, कन्ती आदि प्रसिद्ध कवियों का जमघट रहता था।

कन्ती की शृंखलाबद्ध रचनाएँ वर्तमान में अनुपलब्ध हैं। 'कन्ती-पम्पन समस्येगलु' इस नाम से कुछ प्रकीर्णक पद्य अवश्य मिलते हैं। उन्हें देखकर यह विदित होता है कि वह समस्या-पूर्ति करने में उसी प्रकार निपुण थी, जिस प्रकार कि चम्पा नरेश राजा श्रीपाल की महारानी और उज्जयिनी नरेश राजा पुहिपाल की पुत्री राजकुमारी मैनासुन्दरी।

कहा जाता है कि अभिनव-पम्प एवं कन्ती में प्रायः ही वाद-विवाद चलता रहता था। किन्तु वह पम्प से न तो कभी हार मानने को तैयार रहती थी और न कभी वह उसकी प्रशंसा ही करती थी, यद्यपि भीतर से आदर का भाव अवश्य रखती थी। एक दिन पम्प ने प्रतिज्ञा कि वह कन्ती से अपनी प्रशंसा कराकर ही रहेगा। अतः उसने अवसर पाकर कन्ती के पास झूठ-मूठ में ही अपनी मृत्यु का समाचार भिजवा दिया। इस दुखद समाचार को सुनकर कन्ती बड़ी दुखी हुई। तुरन्त ही वह उनके आवास पर पहुँची और वहीं दरवाजे के बाहर की बैठकर रुदन करने लगी और कहने लगी- "हे कविराय, हे कविपितामह, हे कवि-कण्ठाभरण, हे कवि-शिखामणि, हाय, अब मेरे जीवन की सार्थकता ही क्या रही जब मेरे गुणों की प्रशंसा करने वाली ही संसार से उठ गया? अभिनव-पम्प जैसे महाकवि से ही राजदरबार की शोभा थी। उनकी काव्य-सुषमा के साथ मेरा भी कुछ विकास हो रहा था। थोड़ी ही देर में पम्प हँसता हुआ बाहर आया और कन्ती से बोला "हे प्रिय कवियित्री आज मेरा प्रण पूरा हो गया है, क्योंकि तुमने मेरे घर पर आकर मेरी प्रशंसा की है।" किन्तु धन्य वह कन्ती जो नाराज होने के बदले उन्हें अपने सम्मुख साक्षात् देखकर प्रफुल्लित हो उठी। कन्नड़ साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् पं. के. भुजबली शास्त्री के अनुसार 'कन्ती पम्पन समस्येगलु' इस नाम के जो भी पद्य वर्तमान में उपलब्ध होते हैं, वे साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त सुन्दर हैं। यहाँ पर उनमें से केवल एक पद्य, जो कि निरोष्ठ्य-काव्य का उदाहरण है, प्रस्तुत किया जा रहा है-

सुरनरनागाधीशरहीरकिरीटाग्रलग्नचरणसरोजा।
धीरोदारचरित्रोत्सारितकलुषौघरक्षिसल्करिनर्हा॥

बस, कन्ती के विषय में इससे अधिक कुछ नहीं मिलता।

दान-चिन्तामणि अत्तिमव्वे

महासती श्राविका अत्तिमव्वे (10वीं सदी) न केवल कर्नाटक की, अपितु समस्त महिला-जगत के गौरव की प्रतीक है। 11वीं सदी के प्रारम्भ के उपलब्ध शिलालेखों के अनुसार यह वीरांगना दक्षिण भारत के कल्याणी-साम्राज्य के उत्तरवर्ती चालुक्य-नरेश तैलपदेव आहवमल्ल के प्रधान सेनापति मल्लप की पुत्री तथा महादण्डनायक वीर नागदेव की धर्मपत्नी थी।उसके शील, सदाचार, पातिव्रत्य एवं वैदुष्य के कारण स्वयं सम्राट भी उसके प्रति पूज्य दृष्टि रखते थे।

कहा जाता है कि अपने अखण्ड पातिव्रत्य धर्म और जिनेन्द्र-भक्ति में अडिग आस्था के फलस्वरूप उसने गोदावरी नदी में हुई प्रलयंकारी बाढ़ के प्रकोप को भी शान्त कर दिया था। और उसमें फँसे हुए सैकड़ों वीर-सैनिकों एवं अपने पति दण्डनायक नागदेव को वह सुरक्षित वापिस ले आई थी।

कवि चक्रवर्ती रन्न (रत्नाकर) ने अपने अजितनाथपुराण की रचना अत्तिमव्वे के आग्रह से उसी के आश्रय में रहकर लिखी थी।

महाकवि रन्न ने उसकी उदारतापूर्ण दान-वृत्ति, साहित्यकारों के प्रति वात्सल्य प्रेम, जिनवाणी-भक्ति, निरतिचार शीलव्रत एवं सात्विक सदाचार की भूरि-भूरि प्रशंसा की है और उसे 'दान-चिंतामणि' की उपाधि से विभूषित किया है।

अत्तिमव्वे स्वयं तो विदुषी थी ही, उसने कुछ नवीन-काव्यों की रचना के साथ ही प्राचीन जीर्ण-शीर्ण ताडपत्रीय पाण्डुलिपियों के उद्धार की ओर भी विशेष ध्यान दिया। उसने उभय-भाषा-चक्रवर्ती महाकवि पोन्नकृत 'शान्तिनाथ पुराण' की पाण्डुलिपि की 1000 प्रतिलिपियाँ कराकर विभिन्न शास्त्र-भण्डारों में वितरित कराई थीं। यही नहीं, उसने स्वर्ण, रजत, हीरा, माणिक्य आदि की 1500 भव्य मूर्तियाँ बनवाकर भी विभिन्न जिनालयों में प्रतिष्ठित कराई थीं। इन सत्कार्यों के अतिरिक्त भी उसने जिनालयों की पूजा-अर्चना हेतु प्रचुर मात्रा में भूदान भी दिया और सर्वत्र चतुर्विध दानशालाएँ खुलवाई थीं। इस प्रकार उसने भगवान महावीर के सर्वोदयी आदर्शों का चहुँ ओर प्रचार-प्रसार कर यशार्जन किया था।

महाजन टोली नं. 2,
आरा-802301 (बिहार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकजुटता की आवश्यकता

डॉ. श्रेयांसकुमार जैन

आज की आवश्यकता समाज को एकसूत्र में बाँधने की है। एकसूत्र में बँधे बिना समाज का बिखराव हो रहा है। साधु संस्था अलग-अलग पंथ और पक्ष को पुष्ट कर रही है। श्रावकों में तो विभिन्न घटक बनते ही जा रहे हैं। विद्वान् परस्पर के विरोधभाव से बँटते जा रहे हैं। यह अलगाव और स्वार्थ की प्रवृत्ति धर्म और समाज दोनों की बहुत बड़ी क्षति का कारण है। कोई ऐसा संगठन बने जो सभी को जोड़ने का कर्य करे।

भगवान महावीर के अनुयायी यदि एक धारा में नहीं हुए तो भगवान महावीर का 2600 वाँ जन्मोत्सव मनाने का क्या परिणाम है? हम सभी को यह प्रयास करना चाहिए कि अन्तर्विरोधों का अन्त हो, ताकि छोटे-छोटे स्वार्थों के वशीभूत होकर संस्कृति और समाज का जबरदस्त नुकसान न हो सके।

संगठित होकर जो भी कार्य किया जायेगा, उसका विशेष महत्त्व होगा, उसके परिणाम दूरगामी होंगे। समाज और संस्कृति का उत्कर्ष होगा। राजनीतिक क्षेत्र में सफलता तो मिलेगी ही धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में भी विशेष गौरव की वृद्धि होगी। यह वास्तविकता है कि संगठन के बिना सामाजिक शक्तियाँ विशृंखलित हुई हैं और होंगी। बिखरी हुई सूर्य की रश्मियाँ किसी काँच विशेष में केन्द्रित हो जाने से अपने नीचे रखी हुई रुई आदि को अग्निरूप में प्रज्वलित कराने में सहायक हो जाती हैं। इसके विपरीत असंगठित छोटे से शक्तिहीन तिनके को पक्षी अपने कोमल चञ्चुपुट से भी तोड़ डालता है। यदि वे ही तिनके संगठित हो जाते हैं, तो उनसे हाथी को भी बाँध लिया जाता है, जैसा कि नीतिकार का भी कहना है-

अल्यानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः।।

अर्थात् छोटी-छोटी वस्तुओं की एकता-कार्यसिद्धि में समर्थ होती है, क्योंकि संगठित रस्सीरूप तृणों के द्वारा मन्दोन्मत्त हाथी बाँधे जाते हैं।

उक्त कथन से शिक्षा लेना आवश्यक है कि यदि दिगम्बर जैन समाज छोटे-छोटे निजी स्वार्थों को तिलाञ्जलि देकर एक नहीं होता है, तो वह राष्ट्रीय स्तर के कार्यों को करने/कराने में सक्षम नहीं हो सकता। वर्तमान में समाज को राष्ट्रस्तर पर अपनी प्रतिष्ठा को प्रतिष्ठित करना है। राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक जगत् में विशिष्टता प्राप्त करने के लिये सबसे बड़ी आवश्यकता परस्पर सहयोग की है। समाज का धनिक वर्ग मध्यवर्गीय लोगों से जुड़कर चले। विद्वानों के साथ विचार-विमर्श करके निर्णय लिए जायें। प्रत्येक व्यक्ति के प्रति समानता और सम्मान की दृष्टि रखी जाए तो समाज का विकास ही नहीं होगा, अपितु समाज संस्कारसम्पन्न भी होगा। सहयोग की भावना से होने वाले कार्य सभी को इष्ट होते हैं और सकलार्थसिद्धि दायक होते हैं।

सहयोग की अपेक्षा तो सभी को होगी, क्योंकि भगवान् महावीर का धर्म प्राणीमात्र का धर्म है, वही अहिंसा धर्म है, उसी की छत्रछाया में प्रत्येक प्राणी सुखी हो सकता है। जब जैनधर्म में प्रत्येक प्राणी के कल्याण की भावना की मान्यता है तो क्या दिगम्बर जैनधर्मानुयायी भी परस्पर में एक नहीं हो सकते? यह वर्ष भगवान् महावीर के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार का है। इसमें भगवान् महावीर के द्वारा प्रदत्त शिक्षाओं को जीवन में उतारकर समस्त विरोधभावों को छोड़कर या गौणकर अनेकान्त, अपरिग्रह और अहिंसा के सिद्धान्तों का भरपूर प्रचार करना ही एकमात्र उद्देश्य बनाया जाए। घर-घर में महावीर की वाणी को पहुँचाया जाए और जीवमात्र के उद्धार के कार्यक्रमों को आयोजित कराया जाए। यह सब निर्ग्रन्थ दिगम्बर वीतरागी महावीर के उपासकों की एकजुटता और परस्पर के सहयोग के बिना संभव नहीं है। सहयोग से दुर्लभ और असंभव कार्य सुलभ और संभव बन जाते हैं जैसा कि महाकवि माघ भी कहते हैं-

बृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।
सम्भूयाभ्भोधिमभ्येति महानद्या इवापगा।

अर्थात् जिस प्रकार साधारण नदी महानदी के सहयोग (मेल) से समुद्र में प्रविष्ट हो जाती है उसी प्रकार साधारण मनुष्य भी महापुरुषों की सहायता को प्राप्त होकर कर्यसिद्धि कर लेता है।

सम्पूर्ण सामाजिक संस्थाएँ विद्वत्-संस्थाएँ, शैक्षिक संस्थाएँ, धार्मिक संस्थाएँ, भगवान् महावीर के पञ्चशील : अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह सिद्धांतों को घर-घर में पहुँचाने का ही उद्देश्य लेकर कार्य करें तो निश्चित ही सफलता मिलेगी, भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मोत्सव मनाना पूर्ण सार्थक होगा।

24/32, गांधी रोड, बड़ौत-250611

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् स्वर्णजयन्ती वर्ष समापन समारोह एवं राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् स्वर्ण जयंती वर्ष समापन समारोह के अंतर्गत 155 विद्वानों की उपस्थिति में विद्वत्परिषद् का 21 वाँ साधारण सभा का अधिवेशन एवं '20वीं शताब्दी की दिगम्बर जैन विद्वत्परम्परा का अवदान' विषय पर आयोजित समारोह 15-17 जून 2001 तक सराकोद्धारक परम पूज्य उपाध्याय 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज, पूज्य 108 श्री मुनि वैराग्यसागर जी महाराज एवं पूज्य 105 क्षुल्लक सम्यक्त्वसागर जी महाराज संघस्थ आदरणीय ब्र. अनिता दीदी एवं विदुषी ब्र. मंजुला दीदी के ससंघ सान्निध्य में श्री दिगम्बर जैन प्राचीन पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र बडागाँव (खेकड़ा) बागपत (उ.प्र.) में अपार जनसमूह की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15 जून 2001 को प्रातः 8 बजे ध्वजारोहण के साथ कार्य प्रारंभ हुआ। ध्वजारोहण क्षेत्र कमेटी के मंत्री श्री सुभाषचन्द्र जी जैन ने किया। तदुपरान्त प्रथम सत्र '20 वीं शताब्दी की दिगम्बर जैन विद्वत् परम्परा का अवदान' विषय पर पूज्य उपाध्याय जी महाराज के ससंघ सान्निध्य एवं डॉ. भागचन्द जी भास्कर की अध्यक्षता में प्रारंभ हुआ। संगोष्ठी का मंगल कलश स्थापन क्षेत्र कमेटी के निर्माण मंत्री पदमसेन जैन ने किया एवं दीप प्रज्वलन पं. रतनलाल जी जैन (इंदौर) ने किया। सत्र में डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, बड़ौत, डॉ. फूलचन्द्र 'प्रेमी', वाराणसी, डॉ. नेमीचन्द्र जैन, 'प्राचार्य' खुरई, पं. निर्मल कुमार जैन सतना, ने महत्त्वपूर्ण पत्रवाचन किये। इस सत्र के अध्यक्ष डॉ. भागचन्द जी भास्कर ने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि पंचकल्याणक हों, किन्तु 10 प्रतिशत व्यय साहित्य सृजन एवं विद्यार्थियों के अध्ययन अध्यापन हेतु प्रयोग हो, ऐसी व्यवस्था में उपाध्याय श्री का आशीर्वाद एवं प्रेरणा प्राप्त हो।

पूज्य उपाध्याय श्री ने प्रथम सत्र के पत्रवाचकों के आलेखों की गहन एवं महत्त्वपूर्ण समीक्षा करते हुए कहा कि 20 वीं सदी में विद्वानों ने अनेक कष्टों के बीच कार्य किया है। पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य, श्री ए.एन. उपाध्ये, डॉ. हीरालाल जैन ने साहित्य सृजन समर्पण भाव से किया है। उन्होंने समाज के मानसम्मान की परवाह नहीं की, उसी प्रकार पं. मक्खनलालजी, पं. महेन्द्रकुमार जी, पं. बाबूलाल जमादार आदि विद्वानों ने भी कर्य किये हैं। भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव पर भी भगवान महावीर और उनकी 20वीं शताब्दी की विद्वत्परम्परा पर ग्रन्थ प्रकाशित होना चाहिए। सत्र का सफल संचालन विद्वत्परिषद् के मंत्री डॉ. शीतलचन्द्र जैन ने किया।

15 जून 2001 दोपहर 1 बजे से संगोष्ठी का द्वितीय सत्र पूज्य उपाध्याय श्री के सान्निध्य एवं पं. रतनलाल जी शास्त्री इंदौर की अध्यक्षता में प्रारंभ हुआ। इसमें डॉ. भागचन्द जी भास्कर नागपुर, डॉ. ऋषभ चन्द्र जैन फौजदार, वैशाली, डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, सनावद, पं. शीतल चन्द्र जैन, सागर, श्रीमती सुमनलता जैन, शाहपुर, डॉ. शोभालाल जैन, जयपुर, डॉ. पुष्पराज जैन, ग्वालियर, डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन, श्री महावीर जी, श्री पद्मचन्द शास्त्री, पानीपत, पं. विजयकुमार शास्त्री, श्री महावीर जी ने आलेख प्रस्तुत किये। इस सत्र की अध्यक्षता कर रहे पं. रतनलाल जी शास्त्री ने कहा कि पूज्य उपाध्याय श्री की प्रेरणा से 20वीं शताब्दी के विद्वानों के अवदान को स्मरण कर विद्वत् परिषद् ने सराहनीय एवं प्रशंसनीय कार्य किया है। विद्वानों ने जो आलेख प्रस्तुत किये वे शोधपूर्ण थे। इन आलेखों के छपने से नई पीढ़ी के विद्वानों को लेखन की प्रेरणा मिलेगी।

15 जून, 2001 रात्रि 8 बजे संगोष्ठी तृतीय सत्र प्रारंभ हुआ। इसकी अध्यक्षता पं. सुमतिचन्द शास्त्री मुरैना ने की। इस सत्र में निम्नलिखित विद्वानों ने आलेख प्रस्तुत किये:-

पं. गजेन्द्र जैन, फर्रूखनगर, पं. पूर्णचन्द्र सुमन, दुर्ग, पं. निर्मल कुमार सत्यार्थी, जयपुर, श्रीमती प्रभा जैन, श्रेयांस कुमार शास्त्री, किरतपुर, प्रेमचन्द्र जी दिवाकर डीमापुर, डॉ. कैलाशकमल ग्वालियर, पं. सरमनलाल दिवाकर हस्तिनापुर, पं. भागचन्द इन्दु गुलगंज, डॉ. विमला जैन, फिरोजाबाद, डॉ. बारेलाल जैन, रीवा, पं. दयाचंद शास्त्री सतना, पं. कैलाशचन्द्र मलैया, पं. छोटे लाल जी जैन झांसी, पं. विमल कुमार जैन, जयपुर।

इस सत्र के अध्यक्ष पं. सुमतिचंद शास्त्री ने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि 20वीं शताब्दी के विद्वानों पर संगोष्ठी करके विद्वत् परिषद् के मंत्री डॉ. शीतलचन्द्र जैन ने सराहनीय कार्य किया है। आपके नेतृत्व में विद्वत्परिषद् का संगठन मजबूत हुआ है और परिषद् में चेतना आयी है।

16 जून 2001 को प्रातः 8 बजे पूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में संगोष्ठी का चतुर्थ सत्र प्रारंभ हुआ जिसकी अध्यक्षता पं. गुलाबचन्द्र जी आदित्य, भोपाल ने की। इस सत्र में निम्नलिखित विद्वानों ने आलेख प्रस्तुत किये-

पं. लालचन्द जी जैन राकेश, गंजबासौदा, डॉ. विमलकुमार जैन, जयपुर, पं. सनतकुमार जैन, खिमलासा, पं. माणिकचन्द जैन, बांसातारखेड़ा, श्रीमती सरोज जैन, बीना, पं. ज्योतिबाबू जैन, जयपुर, डॉ. सनतकुमार जैन, जयपुर, श्री सुरेशचन्द जैन, मारौरा, पं. राजकुमार जैन, जयपुर, पं. हेमचन्द जैन, रेवाड़ी, प्रो. के.के. जैन, बीना। सत्र की अध्यक्षता कर रहे पं. आदित्यजी ने उद्बोधन में कहा कि विद्वत्परिषद् के स्वर्णजयन्ती समापन समारोह के अवसर पर 56 वर्ष के इतिहास में इस संगोष्ठी का आयोजन महत्त्वपूर्ण कार्य है। इस संगोष्ठी से विस्मृत विद्वानों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की गई है। संगोष्ठी से अनेक विद्वानों पर महत्त्वपूर्ण आलेख प्रस्तुत हुए हैं। इस महत्त्वपूर्ण उपलब्धि का श्रेय पूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज को है।

16 जून 2001 को दोपहर 1 बजे से विद्वत् परिषद् की साधारण सभा का अधिवेशन हुआ।

16 जून 2001 रात्रि 8 बजे पं. निहालचन्द जी प्राचार्य, बीना की अध्यक्षता में निम्नलिखित विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण आलेख प्रस्तुत किये। डॉ. ज्योति जैन, खतौली, डॉ. शिवदर्शन तिवारी, दमोह, कु. समता जैन, शिवपुरी, डॉ. जी.पी. स्वर्णकार, डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर, डॉ. अशोक कुमार जैन, लाडनूँ, श्रीमती सिन्धुलता जैन, जयपुर, डॉ. हुकुम चन्द संगवे, डॉ. लालचन्द जैन, वैशाली, पं. विजयकुमार जैन, लखनऊ, डॉ. हरिश्चन्द्र जैन, मुरैना, पं. रतनचन्द जैन, रहली, डॉ. सूरज मुखी जैन, डॉ. शीतलप्रसाद जैन, मुज्जफरनगर।

साधारण सभा के अधिवेशन के क्रम में अखिल भा.दि. जैन वि.परिषद् द्वारा तैयार ग्रंथ 'ज्ञानायनी' ग्रंथ का विमोचन पूज्य उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। ग्रन्थ के प्रकाशन में अर्थसौजन्य श्री भोपाल सिंह अशोक कुमार जी, शामली श्री ज्ञानचन्द जी ठोलिया, शामली, शेखचन्द जी पाटोदी, शामली ने प्रदान किया। इस अवसर पर उक्त श्रेष्ठियों का स्वागत भी किया गया।

डॉ. शीतलचन्द्र जैन
मंत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शोध सम्भावनाओं से भरा जैनसाहित्य

डॉ. कपूरचन्द्र जैन

डॉ. कपूरचन्द्र जी जैन कुन्दकुन्द जैन पी.जी. कालेज खतौली उ.प्र. में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष हैं। ये न केवल कुशल शोधकर्ता और शोधनिर्देशक हैं, अपितु जैनविद्या में हुए शोधकार्यों का लेखा-जोखा भी रखते हैं। इन्होंने 'प्राकृत एवं जैनविद्या शोधसन्दर्भ' नाम का ग्रन्थ भी प्रकाशित किया है जिसमें पी-एच.डी., डी.लिट्. आदि उपाधियों के लिए लिखे गये शोध प्रबन्धों का विवरण है। इससे जहाँ विद्याप्रेमियों को जैनविद्या के क्षेत्र में सम्पन्न हुए शोधकार्यों की झलक मिलती है, वहीं भावी शोधकर्ताओं को शोधविषय निर्धारित करने हेतु मार्गदर्शन भी प्राप्त होता है। प्रस्तुत लेख जैनसाहित्य में निहित प्रचुर शोध सम्भावनाओं के तथ्य को अनावृत करता है।

आज का युग विज्ञान का युग है। आज हर क्षेत्र में विज्ञान का बोलवाला है। विज्ञान का अर्थ विशेष ज्ञान भी है। क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप में किया गया कोई भी कार्य वैज्ञानिक कहा जा सकता है। जैन साहित्य/ संस्कृति/ कला/ पुरातत्त्व/आगम/ न्याय/ दर्शन/ पुराण/ योग/ गणित/ राजनीति/ समाजशास्त्र/ भूगोल/शिक्षा/अर्थ-शास्त्र/ कर्मविज्ञान/ मनोविज्ञान/ इतिहास/ नीतिशास्त्र/आचारशास्त्र आदि अनेक विषयों पर जैन साहित्य उपलब्ध है, जिसमें अपरिमित शोध सम्भावनाएँ हैं। इतना ही नहीं हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, गुजराती, मराठी, कन्नड़, राजस्थानी, तमिल, तेलुगु आदि भाषाओं में जैन साहित्य रचा गया है। यहाँ तक कि उर्दू और अंग्रेजी भाषाओं में भी पर्याप्त जैन साहित्य लिखा जा चुका है। पिछले दिनों हमें मुजफ्फरनगर जिले के एक ग्राम में लगभग 25 उर्दू भाषा में लिखित जैन पुस्तकें होने की जानकारी मिली। उन बन्धु ने पं. डोटरमल द्वारा लिखित 'मोक्षमार्ग प्रकाशक' तो हमें स्वयं दिखाई।

इस प्रकार अनेक भाषाओं में अनेक विषयों पर अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं। गुणवत्ता की दृष्टि से भी ये इक्कीस हैं, उन्नीस नहीं। पर प्रश्न है कि कितने लोग इन्हें जानते हैं। सामान्य-जन की बात तो दूर, साहित्य और संस्कृति से सरोकार रखने वाले अजैन तक जैन साहित्य के संदर्भ में कुछ-विशेष नहीं जानते। इसका कारण खोजने का हमने कभी विशेष प्रयत्न नहीं किया। जहाँ तक हम समझ सके हैं इसका मूल कारण यही है कि हमने जैन धर्म के घटक मंदिरों/धर्मायतनों पर तो विशेष ध्यान दिया। साहित्य पिछड़ता ही गया। यही स्थिति कमोवेश आज भी है।

आज आवश्यकता है कि श्रीमान् और धीमान् दोनों मिलकर एक ऐसी कार्य-योजना बनायें जो जैन साहित्य और शोध के विकास में मील का पत्थर सिद्ध हो। श्रीमान् अपनी श्री (लक्ष्मी) और धीमान् अपनी धी (बुद्धि) के समर्पण से इस कार्य-योजना को मूर्तरूप दे सकते हैं। हमारे दिगम्बर समाज में तो इसकी महती आवश्यकता है। क्योंकि श्वेताम्बरों में तो, जैन विश्व भारती लाडनूं, पा.वि. शोध संस्थान, वाराणसी, एल.डी. इंस्टीड्यूट, अहमदाबाद, बी.एल. इंस्टीट्यूट, दिल्ली जैसी कुछ संस्थाएँ हैं जो सर्वतोभावेन इस कार्य के लिए समर्पित हैं, परन्तु दिगम्बर जैन समाज में एकाध को छोड़कर कोई भी ऐसी सर्वमान्य संस्था नहीं है जिसका नाम इस विषय में लिया जा सके।

विदेशों में आंग्ल भाषा में जो कुछ साहित्य है वह अधिकांशतः श्वेताम्बर मान्यता को पुष्ट करने वाला ही है और सम्भवतः उन्हीं के द्वारा/उन्हीं के प्रयत्नों से अनूदित/प्रकाशित/ प्रसारित है।

बीसवीं शताब्दी में विपुल मात्रा में जैन साहित्य का प्रकाशन हुआ है, विशेषतः पिछले 20 वर्षों में अनेक सुन्दर और गुणात्मक पुस्तकें बाजार में आई हैं, पर शोध प्रबन्धों की दृष्टि से देखें तो कम ही शोध-प्रबन्ध प्रकाश में आ सके हैं।

जैन साहित्य में शोधकार्य उपाधि-निरपेक्ष और उपाधि-सापेक्ष दोनों रूपों में हुए हैं, परन्तु यहाँ हम उपाधिसापेक्ष शोध की ही चर्चा करेंगे, क्योंकि उपाधि-निरपेक्ष शोध का क्षेत्र विशाल है, उसका आकलन ऐसे लघु निबन्ध में सम्भव भी नहीं।

उपाधि-सापेक्ष शोध से तात्पर्य ऐसे शोध कार्य से है, जो किसी उपाधि की प्राप्ति हेतु किया गया हो। विभिन्न विश्वविद्यालय डी.लिट्. पी.एच.डी., विद्या वाचस्पति, विद्यावारिधि, डी.फिल्. आदि शोध उपाधियाँ देते हैं। एम.ए. और एम.फिल. के लघु शोध-प्रबन्ध (डेजर्टेशन) के लिए भी अपेक्षाकृत छोटे शोध-प्रबन्ध लिखे जाते हैं। ये एक प्रश्न पत्र के रूप में होते हैं।

प्राकृत, अपभ्रंश और जैन विषयों पर भी अनेक शोध-प्रबंध लिखे जा रहे हैं और पूर्व में भी लिखे जा चुके हैं। एक अनुमान के आधार पर लगभग डेढ़ हजार शोध-प्रबंध प्राकृत, अपभ्रंश और जैन-विद्याओं पर लिखे जा चुके हैं। इनमें से लगभग एक हजार शोध प्रबन्धों की प्रामाणिक सूची हमारे पास उपलब्ध है। इसी प्रकार लगभग 200 शोध प्रबन्ध (प्रकाशित और टंकित) हमारे पास उपलब्ध हैं।

1988 में हमने विश्व विद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली के आर्थिक सहयोग से 'A Survey of Prakrit Jainological Research' प्रोजेक्ट पूर्ण किया था। जो रिपोर्ट आयोग को भेजी उसमें 425 शोध प्रबन्धों की जानकारी थी। इस रिपोर्ट का प्रकाशन 1988 में ही 'प्राकृत एवं जैन विद्या शोध संदर्भ' नाम से किया गया था। 1991 में इस पुस्तक का दूसरा संस्करण और 1993 में परिशिष्ट निकला। अब यह संख्या बढ़ते-बढ़ते एक हजार पर पहुँच गई है।

1990 में श्री कैलाश चंद्र जैन, स्मृति न्यास, खतौली ने प्राकृत एवं जैन विद्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शोध-प्रबन्ध संग्रहालय की स्थापना की जिसमें वर्तमान में लगभग 200 शोध प्रबन्ध संगृहीत हैं। अपनी तरह का यह पहला संग्रहालय है।

वर्तमान में लगभग 75 विश्वविद्यालयों से जैन विद्याओं में शोध हो रहा है। लगभग 35 स्वतंत्र संस्थान जैन विद्याओं पर शोध कराने का दम भरते हैं, किन्तु 4-5 को छोड़कर कहीं से भी शोध उपाधियाँ नहीं मिली हैं। सच पूछा जाए तो वहाँ न शोध है न संस्थान, मात्र कागजी शोध-संस्थान हैं। अनेकों के पास न स्वतंत्र भवन हैं, न पुस्तकालय, यह कटु सत्य है। पन्द्रह विश्वविद्यालयों में प्राकृत एवं जैन विद्याओं के अध्ययन के लिए स्वतंत्र या संयुक्त विभाग हैं।

अब तक लगभग 100 निदेशकों के नाम हमें मिले हैं, जिनके निर्देशन में जैन विद्याओं पर शोध कार्य हुए हैं। इनमें अनेक अजैन हैं। जैन विद्याओं पर हुए शोधकार्य में महिलाएँ भी अग्रणी रही हैं। शोध कार्य करने वालों में जैन एवं जैनेतर दोनों तरह के विद्वान हैं।

विदेशों में भी जैन विद्याओं पर लगभग 50 शोध प्रबंध लिखे जाने की जानकारी है। मुनि सुशील कुमार जी के प्रयास से 1993 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय में एक जैन चेयर की स्थापना हुई थी। मुनि श्री सुशील कुमार जी ने ही न्यूयार्क में अहिंसा विश्वविद्यालय की स्थापना की थी। कनाड़ा एवं यू.एस.ए. में ब्राह्मी सोसायटी नामक संस्था कार्यरत है, साथ ही लगभग 40 जैन सेन्टर अपनी शैशवावस्था में हैं।

अभी तक जो शोध कार्य जैन विद्याओं पर हुआ है उसका लगभग बीस प्रतिशत ही प्रकाशित हो सका है। किसी संस्थान को इन प्रबन्धों को प्रकाशित करने का वीणा उठाना चाहिए।

अब तक हुए शोध प्रबन्धों का विषयवार विवरण निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। (1) संस्कृत भाषा एवं साहित्य-161 (2) प्राकृतभाषा एवं साहित्य-41, (3) अपभ्रंश भाषा एवं साहित्य-41, (4) हिन्दी भाषा एवं साहित्य-94, (5) जैन गुजराती/मराठी/ राजस्थानी/ दक्षिण भारतीय भाषाएँ- 50 (6) व्याकरण एवं भाषा विज्ञान-31 (7) जैनागम-25 (8) जैन न्याय-दर्शन-122, (9) जैन पुराण- 38 (10) जैन नीति/आचार/धर्म/ योग-42, (11) जैन इतिहास/संस्कृति/ कला/पुरातत्त्व-65 (12) जैन-बौद्ध तुलनात्मक अध्ययन-17, (13) जैन- वैदिक तुलनात्मक अध्ययन 21 (14) जैन रामकथा साहित्य-38 (15) व्यक्तित्व एवं कृतित्व- 60, (16) जैन विज्ञान एवं गणित-09 (17) जैन समाज शास्त्र-13 (18) जैन अर्थशास्त्र-05, (19) जैन शिक्षा शास्त्र-06 (20) जैन राजनीति-14, (21) जैन मनोविज्ञान/भूगोल-08 (22) अन्य-22, (23) विदेशी विश्वविद्यालयों से शोध लगभग-80

इस प्रकार हमे देखते हैं कि जैन विद्याओं पर काफी शोध-कार्य हो चुका है, पर इससे भी कई गुना क्षेत्र आज भी अछूता पड़ा है। जैन आगम और न्याय/दर्शन पर ही सहस्त्रों शोधकार्य हो सकते हैं। जैन संस्कृत साहित्य का बहुत सा भाग तो आज अछूता ही है, अनेक संस्कृत पुस्तकें है जिनके सम्पादन और आलोचनात्मक या एकपक्षीय अध्ययन पर शोध कार्य किया जा सकता है। प्राकृत और अपभ्रंश के भी अनेक ग्रन्थ शोधार्थियों की बाट जोह रहे हैं। जैन साहित्य में समाज/अर्थ/ मनोविज्ञान/ भूगोल/शिक्षा आदि के जो तत्त्व हैं उनका आकलन होना बाकी है। आवश्यकता है एक समन्वय केन्द्र की जो इस विषय में शोधार्थियों को मार्गदर्शन दे सके।

आज भारत वर्ष में सभी भाषाओं की अकादमियाँ हैं परन्तु प्राकृत भाषा की कोई अकादमी नहीं। भगवान महावीर की 2600वीं जन्म-जयन्ती के उपलक्ष्य में यदि ऐसी अकादमी की स्थापना हो जाय तो वह स्थायी कार्य होगा। विस्तृत अध्ययन के लिये लेखक की 'प्राकृत एवं जैनविद्या शोध संदर्भ' द्वितीय संस्करण, पुस्तक तथा 'इक्कीसवीं सदी में जैन विद्या शोध' (प्राकृत विद्या, अप्रैल-जून 1997) तथा 1991-93 में जैन विद्या शोध : एक विश्लेषण (अर्हद्वचन, अप्रैल 1994) लेख द्रष्टव्य है।

6, शिक्षक आवास,
श्री कुन्दकुन्द जैन कालेज,
खतौली-252201 (उ.प्र.)

केन्द्रीय महिला-परिषद द्वारा पशुचिकित्सा कैम्प का आयोजन

"प्यार की कोई भाषा नहीं होती। पशु हमारे स्नेह भरे स्पर्श को पहचानता है। निरीह पशु की देखभाल करना, सेवा करना सर्वश्रेष्ठ सेवा है। भगवान महावीर ने भी कहा है 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्'। धरावरा धाम गोशाला में 13 अप्रैल 2001 को आयोजित पशु चिकित्सा केम्प के समय ये विचार प्रगट किये श्रीमती आशा विनायका केन्द्रीय अध्यक्ष महिला परिषद ने।

आपने बताया कि अभी तक लसुड़िया, मांगलिया और पालदा ग्रामों में 3000 पशुओं को खूसडा रोग से बचाव हेतु टीके लगाये गए हैं एवं स्वास्थ्य चेकअप करके डी-वार्मिंग की दवा भी दी गई है साथ ही 10 मेटाडोर भूसा दिया गया। 21 पानी पीने की हौदें जगह-जगह पर लगाई गईं।

डॉ. डी.आर. पाटील जिला चिकित्सक ने बताया कि इस बीमारी से पशु के खुर और मुँह गल कर गिर जाते हैं और वह दो दिन में मर जाता है। यह बीमारी विशेषकर पंजाब और म.प्र. में बहुतायत से फैल गई है। महिला परिषद ने इस बीमारी को रोकने का सराहनीय कार्य किया है।

ग्रामवासियों को पानी छानने का महत्त्व बताते हुए कपड़े की थैलियाँ, क्लोरिन आदि बाँटी गई। साथ ही कम-से-कम पानी का उपयोग कैसे किया जाए एवं स्वच्छ स्वास्थ्यवर्धक भोजन से बच्चों एवं परिवार के स्वास्थ्य का ख्याल कैसे रखा जाए इसकी विस्तृत जानकारी दी गई।

श्रीमती आशा विनायका,
इन्दौर, म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इक्कीसवीं सदी में जैन संस्कृति का भविष्य

कुमार अनेकान्त जैन

श्री कुमार अनेकान्त जैन का यह लेख महत्त्वपूर्ण है। यह उन हेतुओं को उद्घाटित करता है जो जैन संस्कृति और समुदाय को हाशिये पर डालकर रखने के लिये उत्तरदायी हैं। यदि जैन संस्कृति और समाज को विश्वसमाज में सम्माननीय और अनुपेक्षणीय स्थान बनाना है तो उन उपायों का अवलम्बन करना होगा जिनकी ओर लेखक ने ध्यान आकृष्ट किया है।

लेखक उदीयमान हैं। उनमें जैन समाज और संस्कृति के चक्र को वांछित दिशा में मोड़नेवाले विचार जनमने की अनन्त सम्भावनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। यद्यपि यह लेख कई पत्र-पत्रिकाओं में छप चुका है, तथापि इसमें व्यक्त विचार प्रत्येक पत्रिका के पाठकों तक पहुँचना आवश्यक हैं। इस प्रयोजन से प्रस्तुत लेख के महत्त्वपूर्ण अंश 'जिनभाषित' में प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अब तक तो यह बात सर्वमान्य हो चुकी है कि जैन परम्परा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि वैदिक। विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में वैदिक संस्कृति तथा श्रमण संस्कृति का नाम आदर से लिया जाता है। संख्या में अल्प होने के बावजूद जैन संस्कृति की कुछ ऐसी मौलिक शाश्वत विशेषताएँ हैं जो उसे आज तक चिरजीवित रखे हुए है। न जाने कितने धर्म उठते हैं, नष्ट हो जाते हैं किन्तु शाश्वत सामर्थ्य वाले कुछ ही होते हैं जिनके साथ उठने और नष्ट होने की घटनाएँ नहीं होतीं। वे त्रिकाल स्थायी एवं प्रासंगिक होते हैं। जैन संस्कृति ऐसी ही एक संस्कृति है। किन्तु जब-जब संस्कृति पर आक्रमण हुए, इसे नष्ट करने का कुचक्र रचा गया तब-तब ऐसे जैन संतों, महापुरुषों, श्रावकों का जन्म हुआ जिन्होंने इसकी गरिमा को कम नहीं होने दिया। आज ऐसा लगता है कि ऐसे सक्षम नेताओं का अभाव है जो सम्पूर्ण जैन संस्कृति को सही दिशा दे सकें। आज जैन संस्कृति, धर्म, दर्शन पर संकट के बादल गहरा रहे हैं और हम पता नहीं कितनी रुढ़ियों, विचारों की संकीर्णताओं में जकड़े हुए भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मोत्सव मनाने की तैयारी कर रहे हैं।

आज का वातावरण

यदि हम आज के माहौल की बात करें तो साफ जाहिर है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का माहौल है। प्रश्न सत्य या झूठ का नहीं, प्रमाणिकता या अप्रमाणिकता का नहीं, वक्त की सच्चाई का है। वर्तमान परिदृश्य में संप्रदाय/धर्म का अध्याय खोला जाय तो साहित्य, सामाजिक कला के विकास के क्षेत्र में जैन अन्य की अपेक्षा कम ही नजर आता है। ऐसा क्यों? इस 'क्यों' की सच्चाई को समझना आसान नहीं है। हम धार्मिक प्रचार-प्रसार और साहित्यिक उत्थान की चर्चा करें तो पायेंगे कि विश्व के मानचित्र पर हमारी भूमिका एक बिन्दु के समान भी नहीं है। अब हम चर्चा करें जैनेतर धर्मों की जो कि जैनों से काफी अर्वाचीन हैं। हम जानते हैं बौद्ध, इसाई, इस्लाम, सिक्ख धर्म विश्व में अपनी एक अलग पहचान बना चुके हैं। बौद्धों की नीति आरम्भ से साफ रही है, उन्हें राजाश्रय प्राप्त हुआ है, सरकारी सहयोग प्राप्त हुआ है और सबसे बड़ी बात उनकी शिक्षा नीति आरम्भ से विकसित रही। बात चाहे हम नालंदा विश्वविद्यालय की कर लें या फिर तक्षशिला विश्वविद्यालय की, शिक्षा के क्षेत्र में आरम्भ से ही बौद्ध धर्म प्रसिद्ध रहा है। बौद्ध अधिक से अधिक संख्या में बौद्ध धर्म का अध्ययन-अध्यापन आरम्भ से करते आए हैं। यहाँ यह जिज्ञासा सहज ही उठती है कि जब भगवान महावीर और महात्मा बुद्ध की आचार्य परम्परा समानान्तर चल रही थी तब जैनों ने बौद्धों के समकक्ष नालंदा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय स्थापित क्यों नहीं किये? आचार्य अकलंक देव को भी बौद्धों के यहाँ मात्र इसलिए पढ़ने जाना पड़ा कि जैनों के ज्ञान-विज्ञान का कोई केन्द्र नहीं था। शिक्षा के इस क्रमिक विकास का ही परिणाम है कि भले ही बौद्ध भारत से लुप्तप्राय हो गये, किन्तु सम्पूर्ण विश्व में फैले हुए हैं। ईसाई धर्म अपनी मिशनरी आंदोलन प्रक्रिया के तहत विकास करते चले आए। धन और सेवा के बहाने इन्होंने बहुतों को अपना बनाया। बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, कॉन्वेंट स्कूलों के माध्यम से अंग्रेजी और क्रिश्चयेनिटी के पैर इन्होंने बखूबी जमाए। इन्हें भी दिल से सरकारी सहयोग इसलिये मिलता रहा कि इनके माध्यम से विदेशी मुद्रा विदेशों से सहज प्राप्त होती है। मुसलमान अपनी कट्टरपंथी आक्रामक छबि के चलते, वोट बैंक के चलते अपनी पृथक् सत्ता बनाये हुए हैं। इस्लाम को पढ़ने-पढ़ाने के लिये भरपूर सरकारी अनुदान मिलता है। सिक्ख धर्म अभी कुछ सौ वर्ष पुराना ही है, किन्तु फिर भी साहित्यिक, सांस्कृतिक दृष्टि से इनकी पहचान है। इनका दबदबा भी है। विदेशों में सभी स्तरीय पुस्तकालयों में इनका स्तरीय साहित्य मौजूद है। वैदिकों की पहचान भी पृथक् है। उनकी संस्कृति, उनका साहित्य सभी कुछ सरकारी अनुदान से पलते-पुसते हैं।

इस संदर्भ में हम जैन संस्कृति, साहित्य और जैन समाज की तुलना कर सकते हैं। बिना किसी सरकारी सहायता के, बिना वोट बैंक के, बिना किसी हिंसात्मक दबाव के मात्र गिने चुने विद्वानों, संतों और छोटे से समाज और उसके अनुदान के द्वारा अपनी संस्कृति, सभ्यता, साहित्य, दर्शन, कला और पहचान को जीवित रखने के लिए थोड़ा बहुत जितना भी हो सके, पुरुषार्थ किया जाता है। क्या यह काफी है? उसमें भी वणिक मानसिकता विद्या के साथ कितना न्याय कर पाती है? यह सभी को पता है।

यह उपेक्षा क्यों?

भारत में ही जन्मे बौद्ध, सिक्ख और बाहर से आये ईसाई, मुसलमान आज संख्या में कई गुना होने के बाद भी अल्पसंख्यक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घोषित हैं, जिसका सबसे बड़ा लाभ उन्हें यह मिलता है कि उनकी संस्कृति, साहित्य और कला को सुरक्षित रखने की जिम्मेवारी सरकार की भी हो जाती है। वे सरकारी अनुदान से अपने धर्म के प्रचारार्थ शिक्षण केन्द्र खोलते हैं जिनमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता। भारत में ही जन्मी, अहिंसा धर्म का पालन करने वाली जैन संस्कृति, जैन समाज आज हिन्दू बहुसंख्यक में रखी जाने के कारण गहरी उपेक्षा का शिकार हो रही है। हमारा अपना पृथक् कोई वजूद ही नहीं है। हम विदेशी नहीं हैं, हम हिंसक नहीं हैं तो क्या यह हमारी कमजोरी है? इस उपेक्षा का हम सीधा सादा प्रत्यक्ष उदाहरण देखें कि U.G.C. ने Net परीक्षा से बड़ी ही आसानी से जैन विद्या एवं प्राकृत भाषा का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त कर दिया था। बौद्ध, सिक्ख, ईसाई, इस्लाम, वैदिक इनका विषय हटा कर देखते। तब आग लगने का डर रहता है। कुछ बनाना होगा तब दृष्टि इन पर जाती है। कुछ बिगाड़ना हो तो सीधा निशाना प्राकृत भाषा एवं जैन विधाएँ बनती हैं। हम तो यह विचार करते हैं कि यदि आचार्य विद्यानंदजी न होते तो शायद ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पुनः प्राकृत भाषा स्वतंत्र रूप से स्थापित करता। हमारे इस दर्द को समझने वाले कितने हैं? डॉ. मण्डन मिश्रजी के माध्यम से आचार्यप्रवर ने प्राकृत भाषा को पुनः U.G.C. में स्थापित कराके यह जो अभूतपूर्व कार्य किया, विद्यार्थी वर्ग उनके इस उपकार का सदैव ऋणी रहेगा।

विकास : बिना कट्टरवाद के संभव नहीं

हमने जिन विकसित धर्मों की चर्चा की उनकी इस स्थिति का मुख्य कारण खोजें। उसका मुख्य कारण है कट्टरवाद। कट्टरवाद का रूढ़ अर्थ बहुत बिगड़ गया है। हम इसे नकारात्मक अर्थों में न लें। कट्टरवाद का अर्थ है अपने धर्म, संस्कृति और साहित्य के प्रति श्रद्धापूर्ण गहन आस्था। उपदेशों को पालने की अपेक्षा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के यथार्थ को समझना होगा। इन सभी धर्मों की पृष्ठभूमि में यह भी छिपा हुआ है। ये सार्वजनिक उत्थान की बातें जरूर करते हैं ताकि उनकी छबि व्यापक बने, किन्तु ये करते वस्तुतः स्वयं का ही उत्थान हैं। हम समन्वय की मान्यता को लेकर चले थे किन्तु इतने ज्यादा समन्वित हो गये कि हमें हमारी पहचान बनाना मुश्किल हो गया। हमें समन्वय का पक्ष तो लेना है किन्तु इस बात की सावधानी रखनी है कि कहीं हमारा यह समन्वय विलय में परिवर्तित न हो जाये।

अल्पसंख्यक के प्रति गलतफहमी

पिछले कुछ वर्षों में जैनों को अल्पसंख्यक बनाने की माँग तेजी से उठी। काफी बहस हुई। 'अल्पसंख्यक' शब्द को लेकर जैनों के मध्य भी कुछ वहम हुए। कुछ कहने लगे ऐसा हुआ तो हम पिछड़े माने जायेंगे, कुछ ने कहा यह तो आरक्षण है, कुछ ने कहा हिन्दुओं की शक्ति कमजोर हो जायेगी। फलतः बात आयी गई हो गई। अल्पसंख्यक होने का मतलब मात्र संख्या में कम होने से है। संस्कृति, सभ्यता, साहित्य की रक्षा बिना सरकारी सहयोग के नहीं होती। इससे सरकारी सहयोग की गारंटी रहती है। हमारे अधिकार बढ़ते हैं। हम जैनविद्या और प्राकृत भाषा को कहीं भी लागू करने की माँग कर सकते हैं। जैनों में ऐसे कई सम्प्रदाय हैं जो मूर्ति और मंदिर नहीं मानते हैं। ठीक है। किन्तु उन्हीं श्रावकों को जैनेतर मूर्तियाँ और मंदिर बनवाने में करोड़ों रुपया लगाते हुए मैंने देखा है। ऐसे भक्त न तो घर के रह जाते हैं और न घाट के। ये मात्र जैन मंदिर और जैन मूर्तियों का दर्शनपूजन नहीं करते। शेष सभी जैनेतर मूर्तियों, फोटो का इनके घरों में भंडार रहता है। सभी जैनेतर रागद्वेषी देवी-देवताओं के मंदिरों में जाकर दर्शन, पूजन, आरती, भजन ये बहुत ही भक्ति भाव से करते हैं। यह सहिष्णुता नहीं है, अज्ञानता और मिथ्यात्व है। ऐसा वे ही करते हैं जिन्हें अपने धर्म संस्कृति के प्रति बहुमान नहीं है या उसका ज्ञान नहीं है, दृढ़ आस्था नहीं है।

हमारी स्थिति

सभी को यह ज्ञात ही होगा कि वर्ष 1993 में शिकागो में द्वितीय विश्वधर्म संसद का आयोजन हुआ था। हम अपनी स्थिति का अंदाजा इसी आँकड़े से लगा सकते हैं कि उस विश्वधर्म संसद में मुख्य सत्रों जैसे वीडियो फिल्म प्रसारण, विद्वत् परिषद्, बहु-सांस्कृतिक परिवेश, संघर्ष और विश्वीकरण, विज्ञान, विश्व का प्रारम्भ और मानव का भविष्य, व्यापार-कार्य स्थल में नैतिकता, इक्कीसवीं सदी के प्रचार माध्यम, ललित कला प्रदर्शन, शारीरिक और मानसिक व्यायाम जैसे महत्त्वपूर्ण सत्रों में जैन धर्म का प्रतिनिधित्व और भूमिका शून्य प्रतिशत रही। जबकि इन विषयों से जैन साहित्य भरा पड़ा है। भाषण, व्याख्या-संगोष्ठियों, जनसंसद, धर्म और हिंसा, पवित्र ललित कला उत्सव और प्रदर्शनी सत्र में जैनों की भागीदारी 4 प्रतिशत से लेकर 7 प्रतिशत तक ही सिमटी रही। इसकी विस्तृत समीक्षा डॉ. कस्तूरचंद कासलीवाल के अभिनंदन ग्रंथ में डॉ. अम्बर जैन का महत्त्वपूर्ण आलेख करता है।

कितने आश्चर्य की बात है कि विश्व की सर्वाधिक प्राचीन जैन संस्कृति अपने परिचय को मुहताज हो गयी? वास्तव में आवश्यकता है कि इसी ओर समय, शक्ति और धन लगाया जाए।

मौलिकता के बिना पहचान मुश्किल

किसी भी धर्म या समाज का उत्कर्ष मात्र एक क्षेत्र से नहीं होता। जब सर्वविध उन्नति होती है तब उत्कर्ष होता है। अध्यात्म, दर्शन, साहित्य, शिक्षा की उन्नति महत्त्वपूर्ण है किन्तु मात्र इनसे चहुँमुखी विकास संभव नहीं। हम देखें तो पायेंगे कि हममें मौलिकता का अभाव प्रायः रहा है। संगीत के क्षेत्र में भक्ति-रसमय भजन प्रायः फिल्मी धुनों पर आश्रित हैं, लोक प्रचलित पुराने भजनों में अपने इष्टदेवता का नाम जोड़कर हमने काम चलाया है।

अभी इसका ज्वलंत उदाहरण भगवान महावीर की 2600वीं जन्म जयन्ती पर इन्डोर स्टेडियम, नई दिल्ली में आयोजित महोत्सव समिति के कार्यक्रम में देखने को मिला। इतने विशाल कार्यक्रम में 'मैंने पायल जो छमकायी फिर भी आया न हरजायी' वाले बेहूदे गीत की धुन पर जैन बालाओं ने धार्मिक नृत्य किया। साफ जाहिर है हमारे पास न कोई धार्मिक शास्त्रीय नृत्यकला है न संगीत कला। यदि हो भी तो हमें पता नहीं क्योंकि उसका प्रचार नहीं है। जब शब्दचेतना और कला की बारीकियाँ समाप्त हो जाती हैं तो दिमाग में अपसंस्कृति का कीड़ा इसी तरह उपजता है। ऐसी अवस्था में समाज में कला का विकास नहीं हो पाता। कोई खुद की आवाज में नहीं गाता, अपनी नयी धुनें सृजित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं करता। पूजन पद्धतियों से लेकर भजन तक अधिकांश मंत्र, श्लोक, धुनें जैनेतर परम्पराओं से ग्रहण करके परिवर्तित की गयी हैं मौलिक नहीं हैं। यदि गहराई से विचार करें तो हमारी कोई व्यवस्थित शिक्षा पद्धति भी नहीं रही या यूं कहें, इस पर विचार भी लगभग नहीं के बराबर किया गया है। नया तो भौतिक पीढ़ी क्या रचे? प्राचीन मौलिकता को सँभालना, सुरक्षित रखना भी उसे झंझट दिखने लगने लगा है।

विदेशों में जैन धर्म का सच

पिछले कुछ दशकों में बहुत शोर हुआ कि जैनधर्म का प्रचार-प्रसार विदेशों में खूब हुआ है। किन्तु यह प्रचार मूलतः वहाँ पर निवास कर रहे भारतीय जैनों के मध्य तक ही सीमित रहा। जैन गजट 2 दिसम्बर, 99 में प्रो. नन्दलाल जैन, रीवा का प्रकाशित एक महत्त्वपूर्ण आलेख इसी विषय को बतलाता है। वे लिखते हैं कि "जैन धर्म के विषय में, पश्चिमी विद्वानों में (कुछ को छोड़कर), तथा उनके विद्यार्थियों में भी बड़ी भ्रामक धारणाएँ हैं। यदि इस तरह के विवरण पढ़े जावेंगे तो पश्चिम की रुचि नकारात्मक ही होगी। इसका कारण तो यह है कि हमारा साहित्य अधिकांश लेखकों, विद्वानों तथा प्रकाशकों तक नहीं पहुँचा है और जो पहुँचा है उसके परम्परागत निरूपण के आधार पर ही उनकी ऐसी धारणाएँ बनी हैं। इन विवरणों से विद्वानों के अध्ययन की एकांगिता भी प्रकट होती है।... इनके अध्ययन से मुझे ऐसा भी लगा कि विदेशों में किये जाने वाले प्रवचन प्रसारणों से पश्चिम जगत प्रायः अछूता ही रहा है। 'सेवन सिस्टम्स आफ इंडियन फिलोसोफी' और 'दी वर्ल्ड रिलिजयन्स रीडर (रटलज)' जैसी अनेक पुस्तकों में जैन धर्म का विवरण ही नहीं है। हाँ, सिक्खधर्म का विवरण प्रायः सभी में है, उनका साहित्य भी सभी स्थानों पर दिखा।" इस प्रकार लेखक ने ऐसे कई तथ्य उजागर किये हैं जिनसे यह पता लगता है कि विदेशों में भारतीय जैनों की तरफ से प्रवचनों/विधानों के हो-हल्ले और ध्यान-योग की फैशनबाजी के सिवाय शैक्षणिक स्तर पर कोई प्रभावी कार्य नहीं हुए हैं।

अब क्या करना है?

आजादी के बाद से आज तक जो हुआ वह पहली और दूसरी पीढ़ी ने किया। प्रश्न है अब हमें क्या करना है? नयी पीढ़ी को यह बागडोर सँभालनी होगी। पिछली पीढ़ी ने कुछ दिया उसे अपनाना होगा, जो भूलें कीं उन्हें हटाना होगा। अब इक्कीसवीं सदी में तराजू को छोड़कर कलम धारण करनी होगी। हिसाब लिखने की जगह इतिहास लिखना होगा। एकजुट होकर युग के अनुरूप अपनी प्रस्तुति देनी होगी तभी इक्कीसवीं शताब्दी सार्थक होगी और जैन संस्कृति का वजूद बच पायेगा।

अब भी न सँभलेंगे तो मिट जायेंगे खुद ही,
दास्ताँ तक भी न होगी हमारी दास्तानों में।

जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय
लाड़नूँ -341306 (राज.)

प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द्र जी पुष्प का अखिल भारतीय सम्मान

भगवान् महावीर स्वामी के 2600वें जन्म महोत्सव के पावन प्रसंग पर दिल्ली के निकटवर्ती अतिशय क्षेत्र बड़ागाँव (खेकड़ा) में आयोजित भव्य समारोह में विख्यात विद्वान् प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द्र जी जैन 'पुष्प' को स्वर्णप्रशस्ति, शाल, श्रीफल, एवं पगड़ीबन्धन से सम्मानित कर 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' की उपाधि से अलंकृत किया गया। इस अवसर पर श्री 'पुष्प' जी के साथ उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रामबाईजी को भी सम्मानित किया गया।

विद्वत् सपर्या का यह अनूठा समारोह सराकोद्धारक सन्त उपाध्यायरत्न श्री ज्ञानसागर जी मुनि महाराज के ससंघ सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

समारोह में अखिल भारतीय विद्वत् परिषद् और शास्त्री परिषद् के लगभग 300 ख्यातिप्राप्त विद्वानों, हजारों गण्यमान्य नागरिकों एवं शताधिक संस्थाओं ने पं. 'पुष्प' जी को सम्मानित किया। उपाध्याय श्री ने पं. 'पुष्प' जी को आशीष देते हुए कहा कि श्रुत परम्परा हमें केवली भगवन्तों के माध्यम से मिली जिसे विद्वानों ने सरल भाषा में समाज को प्रदान किया। पं. 'पुष्प' निःस्पृही, व्रती, अनुशासित एवं चरित्र के प्रति जागरुक, श्रेष्ठ विद्वान हैं। अन्य प्रतिष्ठाचार्यों एवं विद्वानों को भी इनका अनुकरण करना चाहिए।

समारोह के मुख्य अतिथि श्री शान्ति कुमार जैन (आई.पी.एस.) उपमहानिरीक्षक (एस.पी.जी.) ने कहा कि 'पुष्प' जी का सम्मान ज्ञान का सम्मान है। विषमताओं के बीच अडिग रहना उनकी विशिष्टता है। इस अवसर पर श्री डी.टी. बार्डे (आई.पी.एस.) भी उपस्थित थे। इस अवसर पर 'पुष्प' जी के व्यक्तित्व, वैदुष्य और कर्तृत्व को उजागर करने वाला 800 पृष्ठ का विशाल अभिनन्दन ग्रन्थ 'पुष्पाञ्जलि' भी समर्पित किया गया।

समारोह में बालब्रह्मचारी श्री जयकुमार 'निशान्त' जी को अखिल भारतीय समाज की ओर से 'प्रतिष्ठाचार्य' पद पर प्रतिष्ठित कर प्रशस्ति समर्पित कर सम्मानित किया गया। लगभग पाँच घण्टे तक चले इस भव्य कार्यक्रम का सफल संचालन अभिनन्दन ग्रन्थ के संयोजक-सम्पादक डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' ने किया।

सम्मान समारोह की अध्यक्षता श्री धर्मचन्द्र जैन (प्रीत बिहार) ने की। अभिनन्दन ग्रन्थ का लोकार्पण श्री राजेन्द्र कुमार जैन (शालीमार बाग) के द्वारा सम्पन्न हुआ। समागत मनीषियों और अतिथियों का सम्मान स्वागताध्यक्ष श्रीचन्द्र जैन, चावल वाले, मुजफ्फरनगर के साथ-साथ अखिल भारतीय अभिनन्दन समारोह समिति के अध्यक्ष श्री बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद, महामंत्री श्री चमनलाल जैन राजस्थली, कार्याध्यक्ष श्री कपूरचन्द्र घुवारा एवं अन्य सदस्यों ने किया। विद्वत् सपर्या के इस अनुपम कार्यक्रम को बीच-बीच में संगीत की रस माधुरी से भाव-विभोर किया अहिंसा म्युजिकल ग्रूप, टीकमगढ़ के श्री डी.के. जैन और उनके साथियों ने।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यंग्य

दोषारोपण का खेल

शिखरचन्द्र जैन

श्री शिखरचन्द्र जी जैन पेशे से इंजीनियर हैं। भिलाई स्टील प्लांट के महाप्रबंधक पद से हाल ही में सेवानिवृत्त हुए हैं। अभिरुचि शुरू से ही साहित्यिक रही है। व्यंग्यलेखन में इन्हें विशिष्ट दक्षता हासिल है। 'सरिता', 'मुक्ता' आदि प्रसिद्ध पत्रिकाओं में इनके व्यंग्य प्रकाशित हो चुके हैं। मेरे विशेष आग्रह से 'जिनभाषित' के लिए नियमित रूप से लिख रहे हैं। प्रस्तुत व्यंग्य इसी की अगली कड़ी है। दोषारोपण आनन्दानुभूति कराने वाला महत्त्वपूर्ण खेल है। इस व्यंग्य को पढ़कर यदि आप चाहें तो अपनी अनुभूतियों के भण्डार से दोषारोपण के कुछ और उदाहरण हमें प्रेषित कर सकते हैं।

विफलता का दोष किसके सिर मढ़ दिया जाय, यह समस्या, आदमी के सामने, सृष्टि के प्रारम्भ से ही रही है। यहाँ विफलता से मेरा आशय न केवल वांछित लक्ष्य प्राप्त न कर पाने से है, बल्कि किए गए किसी कार्य या प्रयत्न के अप्रिय परिणाम से भी है। दोषारोपण से मेरा तात्पर्य न केवल एक की असफलता के लिए दूसरे को दोषी ठहरा देने से है, बल्कि ऐसा कर, बच निकलते हुए, परमानन्द की अनुभूति प्राप्त करने से भी है। प्रकट है कि ऐसा कर पाना सहज नहीं है। विशेषकर तब, जबकि अन्य लोग भी चतुर होते जा रहे हैं। वस्तुतः वो हो ही गए हैं और इस कारण यह समस्या अब और भी जटिल हो गई है।

पहले ऐसा नहीं था। मानव-सभ्यता की आरम्भिक अवस्था में लोग बहुत थोड़े में ही संतुष्ट हो जाया करते थे। मसलन, मानव-जाति की उत्पत्ति तथा इसके फलस्वरूप, कालांतर में उपजे बवंडर के लिए, जो कि अभी तक थमा नहीं है, केवल वर्जित फल को दोष देकर ही लोग संतुष्ट होकर रह गये। भाग्य, जिसे न कभी किसी ने देखा न जाना, युगों-युगों तक, विफलता के लिए दोषी ठहरा दिए जाने का उत्तरदायित्व भली-भाँति निभाता रहा है। एक अहम युद्ध में करारी हार के लिए, एक अदने से घोड़े की मामूली-सी नाल के न होने को ही दोषी मानकर संतोष कर लिया गया। इस तरह, कई-एक अदृश्य अथवा निर्जीव वस्तुएँ, एक लम्बे अरसे तक, आदमी को, असफलता की पीड़ा से राहत दिलाने का कार्य सफलतापूर्वक करती रहीं और आदमी बाकायदा इनसे संतुष्ट होता रहा।

लेकिन यह स्थिति शाश्वत नहीं रही। कारण कि आदमी हर क्षेत्र में निरंतर अनुसंधान करते हुए, आनंद प्राप्ति के नए-नए तरीके खोजता रहा तथा अपने जीवन को अधिक से अधिक सुखमय बनाने का प्रयास करता रहा। यद्यपि शास्त्रों में इस बात का स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया था कि संसार में सुख है ही नहीं, फिर भी लोग, रेत से तेल निकालने के माफिक, येन-केन-प्रकारेण आह्लादित हो लेने के अवसर तलाशने में लगे रहे और इस प्रक्रिया में कब, किसने, अपनी असफलता का दोष किसी और के सिर मढ़ दिया और फिर उसे तिलमिलाते हुए देख कर आनन्द का अनुभव कर लिया, कहना मुश्किल है। पर शनैः-शनैः ज्यादा से ज्यादा लोग इस पद्धति को अपना कर प्रसन्न होने लगे और इस तरह एक-दूसरे पर दोषारोपण का खेल प्रचलन में आया।

कहते हैं कि सफलता का श्रेय लेने, लोगों की लाइन लग जाती है, पर विफलता का बोझ उठाने कोई आगे नहीं आता। इसके लिये जब आवश्यकता होती है, जाँच आयोग का गठन करना होता है, जो कि अनगिनत बैठकें, अनेक अवधि-विस्तार तथा काफी मशक्कत के बाद यह तो पता लगा देता है कि दोषी कौन नहीं है पर बहुधा यह नहीं बतला पाता कि दोषी कौन है! दोषी खोजने हेतु जाँच आयोग का गठन, सर्वप्रथम कब हुआ, यह तुरंत बतला पाना तो मेरे लिए संभव नहीं है, शोध करना होगा, पर ऐसा लगता है कि इसका संबंध, शासन में प्रजातांत्रिक प्रणाली के आविर्भाव से रहा होगा। क्योंकि इस प्रणाली में किसी कृत्य अथवा निर्णय के लिए किसी एक व्यक्ति को उत्तरदायी ठहराना सहज नहीं होता। सबकी सामूहिक जिम्मेदारी मानी जाती है। इस बात से ऐसा भी आभासित होता है कि वस्तुतः प्रजातंत्र की स्थापना का उद्देश्य ही यह रहा होगा कि शासन अथवा राजनीति में लिए गए निर्णय के लिए किसी एक व्यक्ति को दोषी न ठहराया जाए तथा कम से कम इन क्षेत्रों में तो व्यक्तिगत दोषारोपण से बचा जाए। इस तरह खेल को कुछ और जटिल बनाते हुए इसके नियम और आचार-संहिता के निर्माण का प्रयत्न भी किया गया।

पर प्रयत्न कोई कितना ही कर ले, नियमों और आचार-संहिताओं से आदमी का वैसे भी छत्तीस का आँकड़ा है। सबसे ज्यादा आनंद, आदमी को, नियम तोड़ने और आचार-संहिता का उल्लंघन करने में ही आता है। अतः दोषारोपण के खेल में किसी नियम का पालन होगा अथवा कोई आचार-संहिता मानी जायेगी, ऐसा सोचना भी नादानी होगी।

विदित हो कि यह खेल सर्वव्यापी है, बहु-आयामी है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी खेला जाता है और अंतर्राज्यीय स्तर पर भी। देश के अन्दर यह खेल न केवल राज्यों के बीच बल्कि शहरों, नगरों, कस्बों और गाँवों के बीच भी खेला जाता है। भौगोलिक सीमाओं के परे, यह खेल विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, जातियों, कुनबों, पुरुषों, महिलाओं, पति-पत्नी, बाप-बेटों आदि के बीच समान रूप से प्रिय है और बिला-नागा खेला जाता है।

इस खेल में कुश्ती प्रतियोगिता की तरह एकल अथवा कबड्डी की तरह सामूहिक भागीदारी हो सकती है। एक व्यक्ति एक समूह से भिड़ सकता है अथवा पूरा समूह एक व्यक्ति के पीछे पड़ सकता है। समूह में खिलाड़ियों की संख्या पर भी कोई पाबंदी नहीं है। प्रादेशिक स्तर का कोई अदना-सा राजनीतिक दल, राष्ट्रीय स्तर के किसी विशाल राजनीतिक दल पर निर्भय हो दोषारोपण कर सकता है। बड़े दल तो, खैर, छोटे दलों को, अगर वे उनके गठबंधन में नहीं हैं तो, हिकारत की नजर से देखते ही हैं।

ज्ञातव्य है कि हमारे देश के एक समय के प्रसिद्ध राजनीतिक दल के सदस्य एवं अध्यक्ष जिसमें अब केवल एक ही सदस्य शेष है उस दोषारोपण के खेल में सबसे कुशल खिलाड़ी माने जाते हैं। वह कभी भी, किसी पर भी, किसी भी प्रकार का दोषारोपण बेखटके कर जाते हैं और ऐसा करते हुए अच्छी-भली चलती हुई सरकार को गिराने की क्षमता रखते हैं। एक राजनीतिक दल ने तो चुनाव में अपनी हार के लिये सीधे चुनाव आयोग को ही दोषी करार दिया। कतिपय राजनीतिक दलों के सदस्य, अपने ही गोल-पोष्ट पर गोल करते हुए पाये जाते हैं। इस तरह, इस खेल में, सभी राजनीतिक दलों की सक्रिय भागीदारी के उदाहरण अपरिमित हैं। आप यदि चाहें तो अपनी पसंद के कुछ और उदाहरण यहाँ जोड़ कर इस लेख को और आगे बढ़ा सकते हैं। मैं बस यहीं विराम लूँगा।

7/56-ए, नेहरू नगर (पश्चिम), भिलाई (दुर्ग) छत्तीसगढ़ -490020

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालवार्ता

एक वृक्ष की अन्तर्वेदना

शुद्धात्मप्रकाश जैन, प्राकृताचार्य

जेठ माह की दुपहरी थी। सिर पर सूर्य आग के गोले की भाँति तप रहा था। पसीने के कारण सारे कपड़े बदन पर चिपक गये थे। माथे से निरन्तर पसीना चू रहा था। मैं काफी थक गया था। एक तो लम्बा सफर और दूसरे भूख भी जोरों की लग आई थी। मैंने सोचा अब कहीं पर थोड़ा विश्राम कर लिया जाये। कुछ दूर जाने पर मार्ग में एक घना वृक्ष दिखाई दिया। मैं वृक्ष के पास जाकर अपने घोड़े से उतरा। उसे थोड़ा चारा-पानी देकर सहलाया और सुस्ताने के लिये एक ओर बाँध दिया। मैंने भी अपनी पोटली खोली और खाना खाया। बावड़ी का शीतल जल पीकर बहुत राहत मिली। विश्राम के लिये कुछ समय वृक्ष के नीचे लेटा कि न मालूम कब मेरी आँखें लग गईं और मैं स्वप्नलोक में विचरने लगा।

सपने में देखता हूँ कि मैं जिस वृक्ष के नीचे सोया था वही वृक्ष मुझसे बातें कर रहा है। वृक्ष ने पूछा- 'राहगीर! कहाँ से आये हो और कहाँ जा रहे हो?' मैंने उत्तर दिया- 'राजस्थान प्रान्त के करौली जिले के गुढ़ाचन्द्रजी नाम के एक छोटे से कस्बे से चला आ रहा हूँ और इन्द्रप्रस्थ की ओर जा रहा हूँ।' वृक्ष बोला- 'पथिक! तुम ग्रीष्म के आतप से बचने के लिये मेरी छाया तले विश्राम करने बैठे हो, पर यह भी कभी सोचा कि मैं इस आतप से बचने के लिये कहाँ जाकर विश्राम करूँ? क्या मैं भी कहीं जा सकता हूँ? क्या मेरे पैर हैं?' मैंने वृक्ष पर एक सहानुभूतिपूर्ण नजर डाली। वृक्ष ने कहा - 'क्या तुम मेरी वेदना समझते हो? क्या मैं किसी से मेरी वेदना कह भी सकता हूँ? यदि मैं किसी से कहूँ भी तो कौन मेरी सुनेगा?' मैंने तरुवर को धैर्य बँधाते हुए कहा -'हे तरुवर! तुम क्यों इतने व्यथित होते हो? तुम्हें क्या कष्ट है? जरा मुझे भी तो सुनाओ अपनी दुःखभरी कहानी। मैं सुनूँगा तुम्हारी पीड़ा को। बोलो, तुम्हें क्या कष्ट है?'

वृक्ष ने एक लम्बी आह भरी और बोला- 'पथिक! क्यों व्यर्थ मेरा दुखड़ा सुनकर अपने गन्तव्य के लिये विलम्ब करते हो? चले जाओ अपने गन्तव्य की ओर अन्यथा...।'

मैं वृक्ष की बात बीच में ही काटकर बोला- 'वृक्षराज, क्यों मुझे संवेदनाशून्य बनाते हो? क्यों मेरे मनुष्यत्व को लज्जित करना चाहते हो? वह मनुष्य ही क्या जो दूसरों के दुःखों को नहीं बँटाये? मैं तुम्हारी दर्दकथा सुनने को आतुर हूँ।'

'क्या तुम मेरा दुख दूर कर भी पाओगे?' वृक्ष का कथन था।

'हाँ, मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि अपनी सामर्थ्य के अनुसार मैं तुम्हारा दुखड़ा दूर करूँगा। मैं तुम्हारी अन्तर्वेदना जानने के लिये सन्नद्ध हूँ।'

'तो सुनो।' वृक्ष अपनी वेदनाभरी कथा सुनाने लगा-

'पथिक! बरसात की ऋतु थी। वर्षों पहले इसी भूमि पर एक छोटा सा अंकुर फूटा और धीरे-धीरे उसमें कोंपलें निकलने लगीं। वह नन्हा सा पौधा सारा समय अपनी नन्हीं-नन्हीं आँखों से सृष्टि को निहारा करता था। वह अकेला ही चुपचाप यहाँ सृष्टि के रंगमंच पर होने वाले क्रियाकलापों को शान्तभाव से देखता रहता था। कभी जोरों की हवा चलती थी तो वह भूमि पर चित्त होकर सो जाता था। दिनभर सूर्य की धूप में तपता रहता था। प्रकृति की कठोर प्रवृत्ति से उसका कोमल गात मुरझा जाता था।

एक दिन किसी नटखट बालक ने उस पौधे के अनेक पत्ते लकड़ी की मार से गिरा दिये थे। बेचारा पौधा आँसुओं से भीग गया। इतना ही नहीं, एक बार आकाश से ओलों की बौछारें आईं तब वह पौधा बेसुध होकर लड़खड़ाते हुए अचेत हो गया। काफी समय बाद उसके जख्म भरे और कुछ स्वस्थ हुआ तब फिर से अपने आपको सँभाला, पर अभी उसका दुर्भाग्य सोया न था। एक दिन इसी मार्ग पर जाती हुई एक गाय ने उस पौधे की कुछ टहनियों को चबा डाला। बेचारा पौधा अतीव पीड़ा से कराह उठा। अपने अंगों को कटते देखकर उसकी आँखों में खून उतर आया पर क्या कर सकता था वह निरुपाय। कभी प्यास लगती तो यहाँ कौन उसे पानी पिलाने आता? इस प्रकार क्षुधा-तृषा सहते हुए दैव के भरोसे वह धीरे-धीरे बढ़ने लगा। वही पौधा आज तुम्हारे सामने इतने विशाल रूप में फैला हुआ है।'

मैं डबडबाये नेत्रों से उसकी ओर देखता रहा और वृक्ष ने आगे कहना प्रारंभ किया- 'इस प्रकार कुछ दिन बीते, महीने बीते और कई वर्ष गुजर गये। मैं काफी कष्टों को सहता हुआ किशोर हुआ। कभी इस मार्ग से ऊँट गुजरता तो वह अपनी लम्बी गर्दन को ऊँचा करके मेरी टहनियों को बेरहमी से तोड़कर चबा कर खा जाता था। कोई पथिक अपने पशुओं के आहार के लिये मेरी डालियों को कुल्हाड़ी के तीक्ष्ण प्रहार से काटकर ले जाता था। बहुत समय बीतने पर वापस मेरे घाव भरते थे और मैं पुनः लहलहाने लगता। किसी दिन एक वानर-समूह आकर मेरे शरीर पर उछल-कूद करने लगा। मेरी डालियों को जोर से झकझोरने लगा, परन्तु उन दुष्ट वानरों ने मेरी पीड़ा की ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया। अपितु उन्होंने जी भरकर मस्ती की, जिससे मेरे बहुत सारे पत्ते जमीन पर गिर गये। कभी शीत के कारण पाला पड़ा तो मेरे सारे पत्ते जीर्ण-शीर्ण हो गये और कभी तेज गर्मी के कारण सारे पत्ते सूख गये। मैं प्यास से व्याकुल हो जाता था, परन्तु यहाँ मेरी कौन सुनने वाला था? आखिर दैव के द्वारा रक्षित मैं इतना बड़ा हुआ।

वसन्तऋतु का समय आ गया था। मैं पूरी तरह मस्ती में झूम रहा था। मेरा हरा-भरा शरीर प्रातःकालीन सूर्य की आभा में दमक रहा था। मैं बहुत खुश होकर गाना गा रहा था, पर अभी मेरे भाग्य में बहुत दुःख देखना बाकी था। इस तरह मेरे कुछ दिन भी चैन से न बीते थे कि फिर एक विपदा आ खड़ी हुई। एक दुष्ट निर्दयी और पापी मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक बड़ा भारी कुल्हाड़ा अपने कंधे पर रखकर मेरे ऊपर चढ़ गया और मेरे एक बड़े हिस्से को काटने के लिये तेजी से मुझ पर प्रहार करने लगा। मेरे दुःख का पारावार नहीं रहा। मैं बुरी तरह चीखता रहा, चिल्लाता रहा। कराहने लगा। आँसू गिराये। गिड़गिड़ाया, परन्तु उसने मेरी एक नहीं सुनी और मेरे शरीर पर एक गहरा घाव बना दिया। फिर वह थक जाने पर खाना खाने के लिये अपने घर चला गया और वापस आकर मुझ पर प्रहार करने लगा। मैं तड़फने लगा। मैं मछली की तरह छटपटाता रहा। आखिर मेरा एक बड़ा भारी हिस्सा उसने काटकर जमीन पर गिरा दिया।'

वृक्ष की दुःखभरी कहानी सुनकर मेरी आँखें बरसने लगी। मेरा कंठ अवरुद्ध हो गया। मुझमें उस के प्रति असीम सहानुभूति का भाव जागा। मैंने वृक्ष को अनेक प्रकार से ढाँढस बँधाया और कहा कि - 'सुनो! अब मैं अपना सारा जीवन तुम्हारी रक्षा और सुरक्षा में समर्पित कर दूँगा। मैं स्वयं तो किसी वृक्ष को पीड़ा पहुँचाऊँगा ही नहीं और अन्य लोगों को भी तुम्हारी रक्षा करने के लिये प्रेरित करूँगा। मैं आज से प्रतिदिन नये-नये पौधे लगाऊँगा। मैं अब तुम्हारे उद्धार संबंधी कार्य करूँगा। मैं तुम्हारे उद्धार संबंधी लेख लिखूँगा। इससे संबंधित व्याख्यान दूँगा। पूर्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. जगदीशचन्द्र वसु ने भी यह सिद्ध किया है कि तुम एक भौतिक पिण्ड मात्र नहीं हो, अपितु सजीव संवेदनशील चेतन प्राणी हो। उनके भी पूर्व हमारे आचार्यों, ऋषियों एवं मुनियों ने अनेक धर्मग्रन्थों और पुराणों में तुमको चेतन प्राणी कहा है और तुम्हारी रक्षा एवं दया सम्बन्धी उपदेश भी स्थान-स्थान पर दिया है, परन्तु आज इस विज्ञान के युग में लोगों ने उस उपदेश को भुला दिया है, पर अब विज्ञान भी तुम्हारे साथ है। विज्ञान ने तुम्हें जीव सिद्ध कर दिया है। मैं तुम्हारी समृद्धि के लिये जनजागरण का अभियान चलाऊँगा। मुझे आशा है कि लोग मेरी बात को सुनेंगे और समझेंगे। अब तुम्हारे दुःख बहुत दिन नहीं रहेंगे।'

वृक्ष के चेहरे पर धीमी-सी मुस्कान फूट पड़ी। वह खुश नजर आ रहा था। तभी मेरी निद्रा टूट गई। मैं अपने वचनों के प्रति संकल्पबद्ध था। मैं उठा और अपने घोड़े पर बैठकर अपने गन्तव्य की ओर चल दिया।

149-ए, कटवारिया सराय,
नई दल्ली-110016

प्रार्थना गीत

● *मुनि श्री निर्णयसागर*

वीर प्रभु की हम संतान
हमको बनना है भगवान॥ टेक॥

सत्य अहिंसा इनका गान
जीव सताना दुःख की खान।
वीर प्रभु की.....

निशि भोजन में हिंसा जान
पानी पीना पहले छान
वीर प्रभु की.....

जिनदर्शन का रखना ध्यान
इससे बनते सब भगवान
वीर प्रभु की .....

णमोकार का करना ध्यान
हर मानव की इसमें शान
वीर प्रभु की.....

देह आत्मा पृथक् जान
'निर्णय' बनना तुम भगवान
वीर प्रभु की.....

कविता

शाकाहार चाहिए

● *ऋषभ समैया 'जलज'*

तन भी शाकाहार चाहिए, मन भी शाकाहार चाहिए,
इन प्रवृत्तियों के पोषण को, धन भी शाकाहार चाहिए।

सबको जीने की अभिलाषा, मरने को किसका मन चाहे,
जलचर-नभचर-थलचर सबको, जीने का अधिकार चाहिए।

काँटे की भी चुभन अगर हो, मन के तंतु हिल जाते हैं,
मूक असहाय प्राणियों को फिर, क्यों पैनी तलवार चाहिए?

एक तरफ रसधार दया की, एक तरफ हिंसा का लावा,
बोलो सरस फुहार चाहिए, या जलते अंगार चाहिए?

ऐसा कोई धर्म नहीं है, जिसकी नींव रही हो बर्बर,
प्रबल वासना की तृप्ति को, बस झूठा आधार चाहिए।

मनुज जन्म से शाकाहारी, उसकी यह कैसी लाचारी,
उदर बना डाला क्यों मरघट, इसका सोच विचार चाहिए।

निखार भवन, कटारा बाजार, सागर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रीय जनगणना में जैन समुदाय

- *सुरेश जैन, आई.ए.एस.*

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा जैन समुदाय को 29 मई 2001 से अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में अधिसूचित किया जा चुका है। भारत सरकार के गृहमंत्रालय के आदेशानुसार भारतीय जनगणना में जैन समुदाय की जनगणना अन्य अल्पसंख्यक समुदायों मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, बौद्ध एवं पारसी समुदायों की भाँति स्वतंत्र रूप से की जाती है। स्वतंत्रता के पश्चात् 1961 से 1991 तक की जैन समुदाय की जनगणना की पूर्ण जानकारी उपलब्ध है। 2001 में संकलित जनगणना की जानकारी का अध्ययन, विवेचन एवं प्रकाशन शीघ्र किये जाने की संभावना है।

भारत की जनगणना के अनुसार जैन समुदाय की जनसंख्या वर्ष 1961 से 1991 तक निम्नानुसार रही है-

लाखों में

वर्ष	योग			ग्रामीण			नगरीय			प्रतिशत
	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	वृद्धि
1961	20.27									
1971	26.04	13.42	12.61	10.46	5.23	5.22	15.58	8.18	7.39	28.48
1981	32.06	16.51	15.54							
1991	33.52	17.22	16.29	9.97	5.05	4.92	23.54	12.17	11.37	4.57

मध्यप्रदेश में जैन समुदाय की जनगणना वर्ष 1961 में 1991 तक निम्नांकित रही है- वर्ष 1991 में ग्रामीण क्षेत्र 10.68 प्रतिशत ऋणात्मक वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट है कि जैन समाज ग्रामों से नगरों में स्थानांतरित होता जा रहा है।

लाखों में

वर्ष	योग			ग्रामीण			नगरीय			प्रतिशत
	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	वृद्धि
1916	2.47	1.30	1.17	1.03	.533	.496	1.44	.772	.675	
1971	3.45	1.80	1.64	1.30	.676	.626	2.14	1.12	1.02	39.24
1981	4.44	2.32	2.12	1.43	.744	.688	3.01	1.57	1.43	28.90
1991	4.90	2.55	2.35	1.28	.668	.612	3.62	1.88	1.73	10.20

वर्ष 1981 एवं वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण भारत में जैन समाज की जनसंख्या क्रमशः 32.06 लाख एवं 33.52 लाख है। संबंधित दशाब्दि में वृद्धि 4.57 प्रतिशत हुई है।

वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार निम्नांकित प्रदेशों में जैन समाज की जनसंख्या प्रत्येक प्रदेश के सामने उल्लिखित की जा रही है -

स.क्र.	राज्य का नाम	जनसंख्या (लाख में)
1.	महाराष्ट्र	09.65
2.	राजस्थान	05.63
3.	गुजरात	04.91
4.	मध्यप्रदेश	04.90
5.	कर्नाटक	03.26
6.	उत्तरप्रदेश	01.76
7.	दिल्ली	00.95

मध्यप्रदेश में वर्ष 1981 तथा 1991 में जैन समाज की जनसंख्या क्रमशः 4.45 एवं 4.90 लाख रही है। इस दशाब्दि में राज्य की औसत जनसंख्या वृद्धि दर 27 प्रतिशत की तुलना में जैन समाज की जनसंख्या वृद्धि दर केवल 10 प्रतिशत रही है। यह तथ्य निःसंदेह प्रमाणित करता है कि जैन समाज ने संयम एवं ब्रह्मचर्य पर आधारित प्राकृतिक उपाय एवं परिवार नियोजन के सघन कृत्रिम उपाय अपनाकर राष्ट्रीय कार्यक्रम की सफलता में सराहनीय योगदान किया है। अन्य अल्पसंख्यक समाजों में से क्रमशः मुस्लिम 31 प्रतिशत, ईसाई 24

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिशत, बौद्ध 188 प्रतिशत एवं सिक्ख समाज में 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

मध्यप्रदेश में जैन समाज का सर्वाधिक घनत्व सागर, इंदौर, जबलपुर, मंदसौर एवं रतलाम जिलों में है। इन जिलों की कुल जनसंख्या से जैन समाज की जनसंख्या की तुलना करने पर सागर जिले में जैन समाज की जनसंख्या 3 प्रतिशत, इंदौर जिले में 2.3 प्रतिशत, जबलपुर जिले में 1.1 प्रतिशत, मंदसौर जिले में 2 प्रतिशत एवं रतलाम जिले में 2.7 प्रतिशत है। इन जिलों में जैन समाज की कुल जनसंख्या क्रमशः 48,000, 42,000, 30,000, 30,000 एवं 26,000 है।

मध्यप्रदेश के जिलों में न्यूनतम जैन समाज सीधी जिले में 114 एवं दतिया जिले में 353 है। सीधी की जनसंख्या में 1981 से 1991 में कोई वृद्धि नहीं हई है। यहाँ की जनसंख्या आश्चर्यजनक रूप से 1981 तथा 1991 से 114 रही है। बालाघाट जिले में इन दस वर्षों में केवल 0.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि होशंगाबाद जिले तथा राजगढ़ जिले में इस दशाब्दि में जैन समाज की जनसंख्या क्रमशः 5 प्रतिशत एवं 4 प्रतिशत कम हुई है। सीधी, रीवा एवं बालाघाट जिले में वर्ष 1991 में जैन समाज की जनसंख्या क्रमशः 114, 547 एवं 4,007 रही है।

जैन समाज की जनसंख्या में इस दशाब्दि में सर्वाधिक वृद्धि दर भोपाल में 38 प्रतिशत तथा सरगुजा में 36 प्रतिशत रही है। भोपाल तथा सरगुजा की वर्ष 1991 की जनसंख्या क्रमशः 15,000 एवं 1,300 रही है। प्रदेश की राजधानी होने के कारण भोपाल नगर में जैन समाज की जनसंख्या में सतत वृद्धि हो रही है।

आदर्श कथा

मन के भूत

यशपाल जैन

एक बार एक न्यायाधीश की अदालत में एक मामला पेश हुआ। एक आदमी ने दूसरे आदमी की ओर संकेत करते हुए कहा, "इसने मेरा सिर फोड़ दिया है।" दूसरे ने पहले की ओर इशारा करके कहा, "इसने मेरा सिर फोड़ दिया है।"

न्यायाधीश ने दोनों की बात सुनी और पूछा, "तुम दोनों ने एक-दूसरे के सिर फोड़ डाले, आखिर इसका कारण क्या है?"

एक ने कहा,- "हम दोनों दोस्त थे। मैंने इसे एक दिन बताया कि मैं एक खेत खरीद रहा हूँ। इसने कहा, मैं एक भैंस खरीद रहा हूँ। मैंने इसे समझाया कि तू भैंस मत खरीद। पर यह नहीं माना। बोला, मैं तो खरीदूँगा और जरूर खरीदूँगा।"

इस पर दूसरे ने कहा, "मैंने इससे आग्रह किया कि तू खेत मत खरीद, मैं भैंस खरीदने का तय कर चुका हूँ। पर इसने मेरी बात नहीं सुनी।"

न्यायाधीश ने पहले आदमी से पूछा, "तुमने इसे भैंस खरीदने को क्यों रोका?"

वह बोला, "देखिये, साहब, मैं अपने खेत में अनाज बोता, फसल उगती और तभी इसकी भैंस खेत में घुस आती और फसल को खा जाती। मेरा कितना नुकसान हो जाता।"

न्यायाधीश ने दूसरे से पूछा, "तुमने इसे खेत न खरीदने को क्यों कहा?"

उसने जवाब दिया, "खेत में फसल उगती तो मेरी भैंस उसे देखकर ललचाती और खाने पहुँच जाती। जानवर जानवर है साहब, मैं हर घड़ी उसके सिर पर थोड़े खड़ा रहता।"

न्यायाधीश ने पूछा, "तुम्हारा खेत कहाँ है? और तुम्हारी भैंस कहाँ है?"

न कहीं खेत था, न कहीं भैंस थी।

न्यायाधीश ने हँसकर कहा, "भले आदमियो, तुमने एक-दूसरे के सिर फोड़ डाले उन चीजों के लिए, जो थीं ही नहीं। इसमें कहाँ की बुद्धिमानी है?"

थोड़ा रुककर न्यायाधीश ने आगे कहा, "दुनिया में बहुत-से झगड़े इसी प्रकार बेबुनियाद होते हैं। हम अपने भीतर मन के भूतों को बिठा लेते हैं। ये भूत हमें आपस में लड़ाते हैं। तुम्हारे भीतर भी वे भूत बैठे हैं। जाओ, उन्हें भगाओ और चैन से रहो।"

दोनों ने अपनी भूल अनुभव की और फिर दोस्त बन गये।

इंजीनियरिंग कालेज में प्रवेश

बालचन्द इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नालॉजी, सेठ डब्ल्यू.एच. मार्ग, पो.बा. 635, सोलापुर, 413006 महाराष्ट्र, दूरभाष 0217-65388, 653040 फैक्स 651538 ने भारतीय नागरिकता प्राप्त जैन छात्रों से बी.ई. कोर्स की कम्प्यूटर, मैकेनिकल, प्रोडक्शन, इलेक्ट्रनिक्स, इनफारमेशन टैक्नालॉजी, इलेक्ट्रनिक्स एण्ड कम्युनिकेशन एवं सिविल इंजीनियरिंग शाखाओं के प्रथम वर्ष में प्रवेश के लिये 23 अगस्त 2001 तक निर्धारित प्रपत्र में आवेदन-पत्र आमंत्रित किये हैं। निर्धारित आवेदन-पत्र 450/- की डी.डी. बालचन्द इंस्टीट्यूट आफ टैक्नालॉजी सोलापुर, 413006 महाराष्ट्र के पक्ष में भेजकर प्राप्त किया जा सकता है।

-सुरेश जैन, आई.ए.एस.
भोपाल

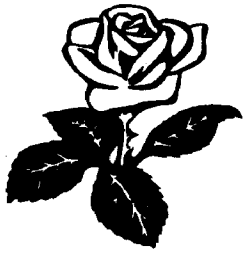

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थक्षेत्र-परिचय

श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र 'सुदर्शनोदय'

आँवा (राजस्थान)

अशोक धानोत्या

राजस्थान के नागर चाल क्षेत्र के टोंक जिले में अरावली पर्वत शृंखलाओं से घिरे अति रमणीय प्राकृतिक छटा बिखेरते हुए पर्वत शृंखला की तलहटी में अपनी भव्यता एवं ऐतिहासिकता को संजोये हुए 'श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र 'सुदर्शनोदय' विद्यमान है। इस क्षेत्र पर भूगर्भ में विराजमान देवाधिदेव भगवान शान्तिनाथ की सातिशय श्वेतपाषाण की 48x42 इंच आकार की पद्मासन प्रतिमा समस्त विश्व को मानव मैत्री एवं करुणा का सहज सन्देश देते हुए मनमोहक लगती है। पदमासन स्थिति में इतनी विशाल प्रतिमा के सहज ही दर्शन नहीं होते। शान्तिनाथ कामदेव भी थे इसलिए इस प्रतिमा की छबि भी नयनाभिराम है प्रतिमा के सभी अंग प्रत्यंग सर्वांग सुन्दर है।

आंवा में मूर्ति प्रतिष्ठा संवत् 1593 में प्रतिष्ठा-शिरोमणि कालूराम छाबड़ा उनके पुत्र रणमल्ल, तेजमल्ल, रणमल्ल के पुत्र वेणीराम छाबड़ा एवं परिवार द्वारा करवाई गई। उन्होंने उस समय सवा लाख रुपया खर्च किया जो आज तो करोड़ों से भी ज्यादा है। आंवा के शासक सूर्यसेन थे जिन्होंने दिल खोलकर प्रतिष्ठा को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दिया एवं स्वयं ने भी जैन धर्म स्वीकार कर लिया जिससे सर्वत्र जैनधर्म की प्रभावना हुई।

प्रतिष्ठाचार्य धर्मचन्द्र भट्टारक ने प्रतिष्ठा के समय अपने पूर्वज भट्टारकों की निषीधिकाएँ नगर से 1 किलोमीटर दूर सुरम्य पहाड़ियों में खड़ी करवाकर बड़ा ही ऐतिहासिक कार्य किया जिसकी स्मृति हजारों वर्षों तक बनी रहेगी। प्रतिष्ठा के समय अनेक चमत्कारिक कार्य स्वतः ही सम्पन्न हुए। प्रतिष्ठाचार्य के पद पर मण्डलाचार्य धर्म चन्द्रजी पधारे। वे अपनी साधना के बल पर ही बिना चले दिल्ली से आंवा तक पहुँचे। यह पंच कल्याणक प्रतिष्ठा पूरे एक सप्ताह तक चली जिसमें भाग लेने वालों की संख्या का अनुमान है कि भोजन व्यवस्था में 750 मन लाल मिर्च का उपयोग हुआ। प्रतिष्ठा में एक चमत्कार और हुआ दर्शनार्थियों की अपार भीड़ थी। जितना घी एकत्रित किया गया था वह समाप्त हो गया तब प्रतिष्ठा कारक एवं प्रतिष्ठाचार्य दोनों की प्रतिष्ठा दाँव पर लगने लगी तो कुएँ में से पानी की जगह घी निकल आया। कार्यक्रम समाप्ति पर उतना ही शुद्ध घी तोल कर वापिस कुएँ में डाला गया। इसे देखकर चारों तरफ जैन धर्म की जय-जयकार होने लगी।

हमारे सातिशय पुण्य के योग से वर्षों की आराधना, प्रार्थना से सन्तशिरोमणि चतुर्थकालीन साधुपरम्परा के आचार्य 108 श्री विद्यासागर जी महाराज के परम शिष्य वास्तुविज्ञानी, तीर्थक्षेत्र जीर्णोद्धारक, ज्ञान ध्यान, तप में लीन आध्यात्मिक संत मुनि पुंगव 108 श्री सुधासागर जी महाराज एवं क्षुल्लक 105 श्री गम्भीरसागरजी, क्षुल्लक 105 श्री धैर्यसागर जी एवं ब्रह्मचारी संजय भैया के पावन चरण इस क्षेत्र पर पड़े। दिनांक 7 मार्च से 22 मार्च 2000 तक यह संघ इस क्षेत्र पर विराजमान रहा।

पूरे संघ को इस क्षेत्र एवं प्रतिमा के दर्शन से अलौकिक आनन्द की अनुभूति हुई। इस प्रतिमा के अतिशय को देखते हुए पूज्य महाराज जी ने इस क्षेत्र का नाम 'श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र 'सुदर्शनोदय' आंवा घोषित किया। उन्होंने इस क्षेत्र के विकास के लिये स्थानीय समाज को प्रेरणा दी।

नगर के हृदय स्थल, मुख्य बाजार के केन्द्र में दो भव्य और विशाल प्राचीन जैन मंदिर हैं जिनमें 12वीं शताब्दी की प्रतिमा विस्तीर्ण चैत्यालय, विशाल प्रांगण, बरामदे, भव्य द्वार, और विशाल शिखर सुशोभित हैं। शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर का प्रबंध बघेरवाल समाज करता है और पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर का प्रबंध अग्रवाल एवं खण्डेलवाल समाज।

यह क्षेत्र जयपुर-कोटा राष्ट्रीय राजमार्ग नं. 12 पर सरोली मोड़ से वाया दूनी दक्षिण पश्चिम में 12 किलोमीटर पक्के सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से वीरोदय सांगानेर 150 कि.मी., ज्ञानोदय नारेली अजमेर 150 कि.मी. कोटा 150 कि.मी. केशवराय पाटन 100 कि.मी. चाँद खेड़ी 250 किमी., भव्योदय रैवासा सीकर 250 कि.मी. दूरी पर स्थित है।

नगर के पश्चिम में सुरम्य एवं मनोहारी अरावली पहाड़ी शृंखलाओं के मध्य एक विशाल पन्द्रहवीं शताब्दी की अतिप्राचीन जीर्ण-शीर्ण नसिया है जो प्रायः खण्डहर हो चुकी है। यह नसिया अतीत में साधु सन्तो की तपस्या स्थली रही है।

इस क्षेत्र को एक गौरवमयी अखिल भारतीय स्तर का तीर्थ बनाने हेतु विशाल 11 फुट उत्तुंग पद्मासन श्री शान्तिनाथ भगवान, 7 फुट उतंग पद्मासन सहस्त्रफणी (1008 फण) पार्श्वनाथ भगवान एवं 7 फुट उतंग पद्मासन जटावाले आदिनाथ भगवान तथा त्रिकाल चौबीसी (भूत, भविष्य, वर्तमान) जिन बिम्ब, मानस्तम्भ धर्मशाला (विद्यासागर त्यागी आश्रम) सिंह द्वार आदि योजनाओ का महाराज श्री ने आशीर्वाद एवं प्रेरणा दी। उक्त योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिये दानवीर श्रेष्ठियों का उत्साह उमड़ पड़ा जिन्होंने अपनी शक्ति अनुसार धनराशि की घोषणाएँ कर पुण्यार्जन किया।

'सुदर्शनोदय' आंवा का जैन समाज समस्त दिगम्बर जैन समाज से निवेदन करता है कि इस पवित्र ऐतिहासिक क्षेत्र के विकास हेतु अधिक से अधिक आर्थिक सहयोग देने व दिलवाने में अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग कर पुण्य लाभ अर्जित करें। यह संस्था पंजीकृत है और दिगम्बर मूल कुन्द-कुन्द आम्नाय अनुसार संचालित है।

प्रचार मंत्री,
श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र
सुदर्शनोदय, आँवा (टोंक) राजस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री शान्ति-वीर-शिव-ज्ञान-विद्यासागरेभ्यो नमः

वर्षायोग : चातुर्मास 2001

साहित्यमनीषी ज्ञानवारिधि दिगम्बर जैनाचार्यप्रवर श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के द्वारा दीक्षित-शिक्षित जैन श्रमण-परम्परा के आदर्श सन्तशिरोमणि जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज तथा उनके द्वारा दीक्षित शिष्यों का वीर निर्वाण संवत् 2527, विक्रम संवत् 2058, सन् 2001 का वर्षायोग विवरण :

(1) सन्त शिरोमणी आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी, मुनि श्री समयसागर जी, मुनि श्री योगसागर जी, मुनि श्री पवित्रसागर जी, मुनि श्री विनीतसागर जी, मुनि श्री निर्णयसागर जी, मुनि श्री प्रबुद्धसागर जी, मुनि श्री प्रवचनसागर जी, मुनि श्री प्रसादसागर जी, मुनि श्री अभयसागर जी, मुनि श्री अक्षयसागर जी, मुनि श्री प्रशस्तसागर जी, मुनि श्री पुराणसागर जी, मुनि श्री प्रयोगसागर जी, मुनि श्री प्रबोधसागर जी, मुनि श्री प्रणम्यसागर जी, मुनि श्री प्रभातसागर जी, मुनि श्री चन्द्रसागर जी, मुनि श्री अजितसागर जी, मुनि श्री सम्भवसागर जी, मुनि श्री अभिनन्दनसागर जी, मुनि श्री सुमतिसागर जी, मुनि श्री पद्मसागर जी, मुनि श्री चन्द्रप्रभसागर जी, मुनि श्री पुष्पदन्तसागर जी, मुनि श्री श्रेयांससागर जी, मुनि श्री पूज्यसागर जी, मुनि श्री विमलसागर जी, मुनि श्री अनन्तसागर जी, मुनि श्री धर्मसागर जी, मुनि श्री शान्तिसागर जी, मुनि श्री कुन्थुसागर जी, मुनि श्री अरहसागर जी, मुनि श्री मल्लिसागर जी, मुनि श्री सुव्रतसागर जी, मुनि श्री नमिसागर जी, मुनि श्री नेमी सागर जी, मुनि श्री पार्श्वसागर जी, ऐलक श्री निर्भयसागर जी,

नोट- आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के द्वारा दीक्षित प्रायः सभी साधुगण बालब्रह्मचारी हैं। जैन श्रमण-परम्परा के ज्ञात इतिहास/जानकारी में यह प्रथम श्रमण संघ है जिसमें वर्तमान दीक्षित 184 साधुगण एवं आर्यिकाएँ भी बालब्रह्मचारिणी हैं।

- आचार्य श्री जी से आज्ञा प्राप्त कर देश के विभिन्न नगरों में लगभग 100 बालब्रह्मचारी भाई एवं 200 बालब्रह्मचारिणी बहनें भी चातुर्मास कर रही हैं।
- आचार्य श्री जी के द्वारा प्रतिदिन प्रातःकाल 'षट्खंडागम' (वर्गणाखण्ड) पुस्तक 14 का तथा अपराह्नकाल 'समयसार' ग्रन्थ का स्वाध्याय कराया जाता है।
- प्रत्येक रविवार को अपराह्न 3 बजे से आचार्यश्री का सार्वजनिक प्रवचन होता है।
- भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव एवं अहिंसा वर्ष के प्रसंग पर भारत वर्ष के नाभिस्थल जबलपुर नगर में ऐतिहासिक त्रिपुरी कांग्रेस की अधिवेशन स्थली एवं नर्मदा (रेवा) नदी के तट पर यह इक्कीसवीं सदी का प्रथम चातुर्मास गोशाला में हो रहा है।

चातुर्मास स्थली - दयोदय तीर्थ, दयोदय पशु संवर्धन एवं पर्यावरण केन्द्र, गौशाला, तिलवारा घाट, पुराने पुल के पास, जबलपुर -482003, मध्यप्रदेश, फोन नं. (0761) 518185, फैक्स-346009

सम्पर्क सूत्र - अध्यक्ष- अरविन्द जैन चावल वाले (0761) 345904 (नि.), 653178, 512129 (दु.), महामंत्री- वीरेन्द्र जैन वीरू (नि.) 345944 (दु.) 348480, मो. 98270-68035, इंजी. अशोक जैन (का.) 426231, मो. 98270-45046, सतीश जैन नेता- (नि.) 512628, मो. 98272-41163, चक्रेश मोदी- मो. 98270-21636, संजय जैन 'अरिहंत' मो.- 98270-92688

(2) मुनिश्री नियमसागर जी महाराज, मुनि श्री पुण्यसागर जी महाराज, मुनिश्री वृषभसागर जी महाराज

चातुर्मास स्थली : श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जी, कपड़ा बाजार, कोपरगाँव, अहमदनगर (महाराष्ट्र), फोन-(02423) 25505

सम्पर्क सूत्र - डॉ. अभयकुमार डगरे (02423) 22080, नितिन कासलीवाल- 23303, प्रवीण गंगवाल-25499, धरमचंद अजमेरा-22325

(3) मुनि श्री क्षमासागर जी महाराज

चातुर्मासस्थली : श्री दिगम्बर जैन महावीर जिनालय महल कालोनी, शिवपुरी- 473551, मध्यप्रदेश

सम्पर्क सूत्र- मोतीलाल जैन, मंगलम् लॉज, महल कॉलोनी, शिवपुरी, फोन (07492) 34364, सुरेश कुमार मारौरा- 33364 (नि.), 33632 (का.)

(4) मुनि श्री गुप्तिसागर जी महाराज

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी निर्माण विहार, नई दिल्ली-117092

(5) मुनि श्री सुधासागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री गम्भीरसागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज,

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ नसियाँ, दादाबाड़ी, कोटा- 324009 राजस्थान, फोन- 0744-431000

सम्पर्क सूत्र : श्री राजकुमार बड़जात्या, 195/196 ए, वंदना, तलवण्डी, कोटा-5, फोन- (नि.) 0744-425936, 425421, (का.) 421802, 423391-96, फैक्स-422104, मो.-98290-96079, ई-मेल-rkb@dscl.com, श्री ऋषभ मोहिवाल, 393, दादावाड़ी विस्तार योजना, कोटा-9, फोन- 0744 (का.) 434653, (नि.) 433653

(6) मुनि श्री समतासागर जी महाराज, मुनि श्री प्रमाण सागर जी महाराज, ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मांझ का मंदिर जी, मेन रोड, टीकमगढ़- 472001, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - अध्यक्ष- गुलाबचन्द जैन धमासिया, फोन- (07683) 42263, मंत्री- ज्ञानचंद नायक-42281, जयकुमार निशान्त- 43138, अरविन्द जैन- 42636, 45369, चक्रेश टड़ैया- 42706, कल्याणचन्द्र नायक- 40515, 44515

(7) मुनिश्री स्वभावसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी, टिकैतनगर, (बाराबंकी) उत्तरप्रदेश।
सम्पर्क सूत्र - सेठ रमेशचन्द्र शान्ति प्रकाश जैन (05241) 72211

(8) मुनि श्री समाधिसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र नेमगिरि, पो. जिन्तूर-431509, (परभणी) महाराष्ट्र
सम्पर्क सूत्र - शान्तराव कलमकर (02457) 20113, 20022

(9) मुनि श्री सरलसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर, पिपरई गाँव-473440 गुना, मध्यप्रदेश।
सम्पर्क सूत्र - नाथूराम सुरेशचन्द्र जैन, किराना मर्चेन्ट, पिपरई गाँव (गुना) म.प्र. (07541) 47223, 47208, 47262

(10) मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, पोदमामूर स्ट्रीट, आरनी, तालुका- वन्दवासी, जिला- तिरुवन्नमलै, तमिलनाडु, फोन- (04173) 26236
सम्पर्क सूत्र - एम. जगनागन, श्रुतकेवली विशाखाचार्य आश्रम तपोनिलयम, कुंदकुंदनगर (04183) 25912, 27018, बुधराज कासलीवाल, पाण्डिचेरी (0413) 33537, 333536, सोहनलाल कोठारी, सेलम (0427) 212060, 212401, 212179

(11) मुनि श्री उत्तमसागर जी महाराज, मुनि श्री पायसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, रामटेक, नागपुर (महाराष्ट्र), फोन- (07114) 55117
सम्पर्क सूत्र- अनिल कुमार जैन, बाम्बेसागर रोडवेज नागपुर- (0712) 771491, 764889 (नि.), (का.) 770085, 762184, 762375, फैक्स-762184, गोकुलचन्द्र जैन बड़कुल, अध्यक्ष- परवारपुरा दिगम्बर, जैन मंदिर ट्रस्ट कमेटी, नागपुर (0712) 764379, (3) मैनेजर- विजय कुमार जैन, रामटेक (07114) 55117

(12) मुनि श्री चिन्मयसागर जी महाराज, मुनि श्री पावन सागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन भवन, सदर बाजार, भाटापारा- 493118, जिला- रायपुर, छत्तीसगढ़, फोन- (07726) 20372 सुरेशमोदी
सम्पर्क सूत्र- प्रकाश मोदी, अध्यक्ष- चातुर्मास व्यवस्था कमेटी, (07726) 20015, 21411, फैक्स- 122344, मो. 98271-10402, संतोष कुमार जैन- अध्यक्ष, जैन समाज भाटापारा, 22417, मो. 98271-10417

(13) मुनि श्री सुखसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर मझगाँव- 590008, जिला- बेलगाँव, कर्नाटक
सम्पर्क सूत्र - श्री बी.जे. गंगई- (0831) 488813, 480625, ए.ए. नेमन्नावर, बेलगांव (0831) 452712

(14) मुनिश्री मार्दवसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र आदीश्वर गिरि, नोहटा- 477204, दमोह, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र -डॉ. संतोष गोयल, फोन- (07606) 97224, 97222,भाटिया जी- 57261

(15) मुनि श्री अपूर्व सागर जी महाराज, मुनिश्री सुपार्श्वसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन बस्ती, साहू नगर, जयसिंहपुर- 416101 (कोल्हापुर) महाराष्ट्र
सम्पर्क सूत्र - श्री डी.के. चौगुले, फोन (नि.) (02322) 25679, (का.) 25448, 28348, मो. 9822131292, बी. पाटिल (0230) 27951

(16) मुनि श्री प्रशान्त सागर जी महाराज, मुनिश्री निर्वेगसागर जी महाराज,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, छतरपुर -471001 (म.प्र.)

(17) आर्यिका श्री गुरुमती जी, आर्यिका श्री उज्जवलमती जी, आर्यिका श्री चिन्तनमती जी, आर्यिका श्री सूत्रमती जी, आर्यिका श्री शीतलमती जी, आर्यिका श्री सारमती जी, आर्यिका श्री साकारमती जी, आर्यिका श्री सौम्यमती जी, आर्यिका श्री सूक्ष्ममती जी, आर्यिका श्री शान्तमती जी, आर्यिका श्री सुशान्तमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अटा मंदिर जी, सावरकर चौक, ललितपुर-284403, उत्तर प्रदेश
सम्पर्क सूत्र- प्रबंधक- प्रेमचंद जैन बिरधा, चम्पालाल जैन नोहरकला- (05176) 72470, ज्ञानचंद जैन इमलिया- 72715, सतीश नजा-74101, 72585, सुभाष सर्राफ- 72445, अजित कुमार जैन, एडवोकेट -72650, नरेन्द्र जैन (छोटे पहलवान) 73150

(18) आर्यिका श्री दृढ़मती जी, आर्यिका श्री पावनमती जी, आर्यिका श्री साधनामती जी, आर्यिका श्री विलक्षणामती जी, आर्यिका श्री वैराग्यमती जी, आर्यिका श्री अकलंकमती जी, आर्यिका श्री निकलंकमती जी, आर्यिका श्री आगममती जी, आर्यिका श्री स्वाध्यायमती जी, आर्यिका श्री प्रशममती जी, आर्यिका श्री मुदितमती जी, आर्यिका श्री सहजमती जी, आर्यिका श्री संयममती जी, आर्यिका श्री सत्यार्थमती जी, आर्यिका श्री समुन्नतमती जी, आर्यिका श्री शाश्वमती जी, आर्यिका श्री सिद्धमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी जैन वार्ड, छपारा- 480884 (सिवनी) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - अध्यक्ष- रमेशचन्द्र जैन, पूर्व विधायक, फोन- (07681) 34335, मंत्री- नरेन्द्र जैन-34272, धन्यकुमार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन- 34407

(19) आर्यिका श्री मृदुमती जी, आर्यिका श्री निर्णयमती जी, आर्यिका श्री प्रसन्नमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन नन्हे मंदिर जी, जैन धर्मशाला, असाटी वार्ड, दमोह-470661, (म.प्र.)
सम्पर्क सूत्र- महेश कुमार जैन बड़कुल, फोन-(07812) 470661, संतोष सिंघई- (नि.) 22394, (दु.) 22047, पदमलहरी- 22407

(20) आर्यिका श्री ऋजुमती जी , आर्यिका श्री सरलमती जी, आर्यिका श्री शीलमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर छोटा पार्श्वनाथ जैन मंदिर, सोधिया मोहल्ला, महाराजपुर- 470226, सागर म.प्र.
सम्पर्क सूत्र - श्री महेन्द्र सोधिया- (07586) 22234, डॉ. पी.सी. जैन-22128, अनिल सोधिया-22228, ताराचन्द सिंघई- 22236

(21) आर्यिका श्री तपोमती जी, आर्यिका श्री सिद्धान्तमती जी, आर्यिका श्री नम्रमती जी, आर्यिका श्री पुराणमती जी, आर्यिका श्री उचितमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, पुलिस थाने के निकट, तेन्दूखेड़ा- 470880, दमोह, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र- सिंघई सुमेरचंद जैन (07603) 63672, डॉ. शिखरचंद जैन- 63686, 63687, प्रेमचंद गोयल - 63738

22) आर्यिका श्री सत्यमती जी, आर्यिका श्री सकलमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर जी, देवेन्द्र नगर- 488333 (पन्ना), मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - अध्यक्ष- राकेश जैन, लाइटवाले, देवेन्द्रनगर, मंत्री- प्रमोद जैन

(23) आर्यिका श्री गुणमती जी, आर्यिका श्री जिनमती जी, आर्यिका श्री कुशलमती जी, आर्यिका श्री धारणामती जी, आर्यिका श्री उन्नतमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर जी खिमलासा-470118 (सागर) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - स्वतन्त्र जैन सराफ (07581) 84264, 84112, 84412, अध्यक्ष- अरविन्द सिंघई, मंत्रि- कमल नायक,चन्द्रकुमार जैन-84250, कोमल चन्द सिंघई- 84234

24) आर्यिका श्री प्रशान्तमती जी, आर्यिका श्री विनम्रमती जी, आर्यिका श्री विनतमती जी, आर्यिका श्री अनुगममती जी, आर्यिका श्री संवेगमतीजी, आर्यिका श्री शैलमती जी, आर्यिका श्री विशुद्धमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर जी, कटंगी-483105 (जबलपुर) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र- अध्यक्ष - डॉ. निर्मल जैन (07621) 68614, दिनेश जैन-68685, 68631, 68657, विजय सिंघई-68656, सुरेन्द्र बड़कुल-68675, ब्र. संजीव जैन-68691, ब्र. अरुण जैन-68671

25) आर्यिका श्री पूर्णमती जी, आर्यिका श्री शुभ्रमती जी, आर्यिका श्री साधुमती जी, आर्यिका श्री विशदमती जी, आर्यिका श्री विपुलमती जी, आर्यिका श्री मधुरमती जी, आर्यिका श्री एकत्वमती जी, आर्यिका श्री कैवल्यमती जी, आर्यिका श्री सतर्कमती जी, आर्यिका श्री श्वेतमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, तात्या टोपे नगर (टी.टी. नगर), टीन शेड, भोपाल-462003, मध्यप्रदेश, फोन- 0755-778441
सम्पर्क सूत्र -श्री अमर जैन (0755) 778471, मो. 98260-24485, शरद जैन (नि) 543522 (दु.) 254075, रवीन्द्र जैन- (नि.) 661065, (का.) 530182,(मो.) 98270-54116

(26) आर्यिका श्री अनन्तमती जी, आर्यिका श्री विमलमती जी, आर्यिका श्री निर्मलमती जी, आर्यिका श्री शुक्लमती जी, आर्यिका श्री अतुलमती जी, आर्यिका श्री निर्वेगमती जी, आर्यिका श्री सविनयमती जी, आर्यिका श्री समयमती जी, आर्यिका श्री शोधमती जी, आर्यिका श्री शाश्वतमती जी, आर्यिका श्री सुशीलमती जी, आर्यिका श्री सुसिद्धमती जी, आर्यिका श्री सुधारमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी कुम्भराज-473222 (गुना) म.प्र.
सम्पर्क सूत्र - राकेश कुमार जैन, अध्यक्ष, स्वर संगम रेडियो, कुंभराज

(27) आर्यिका श्री प्रभावनामती जी, आर्यिका श्री भावनामती जी, आर्यिका श्री सदयमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी, अरथूना-37032 अरथूना- तह. कड़ी (बांसवाड़ा) राजस्थान
सम्पर्क सूत्र -सेठ वास्तुपाल जी (02963) 38204, गोंदालाल जी- 38201

(28) आर्यिका श्री आदर्शमती जी, आर्यिका श्री दुर्लभमती जी, आर्यिका श्री अन्तरमती जी, आर्यिका श्री अनुनयमती जी, आर्यिका श्र अनुग्रहमती जी, आर्यिका श्री अक्षयमती जी, आर्यिका श्री अमूर्तमती जी, आर्यिका श्री अखण्डमती जी, आर्यिका श्री अनुपममती जी, आर्यिका श्री अनर्घमती जी, आर्यिका श्री अतिशयमती जी, आर्यिका श्री अनुभवमती जी, आर्यिका श्री आनन्दमती जी, आर्यिका श्री अधिगममती जी, आर्यिका श्री अमन्दमती जी, आर्यिका श्री अभेदमती जी, आर्यिका श्री उद्योतमती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर जी, पुराना बाजार, मुंगावली- 473 443 (गुना) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र- देवेन्द्र सिंघई, अध्यक्ष (07548) 46659, 46562, (07548) 72082, सुधीर सिंघई- 72097, संजय सिंघई- 72093, 72218

(29) आर्यिका श्री आलोकमती जी, आर्यिका श्री सुनयमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर जी, हटा (दमोह), मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र- मुकेश शाह (07604) 62845, 62878, 62509, मनीष जैन-62355

(30) आर्यिका श्री अपूर्वमती जी, आर्यिका श्री अनुत्तरमती जी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी, बाँदकपुर-470664 (दमोह), मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - अनुज सिंघई (07812) 51229, जिनेन्द्र सिंघई 51260, दीपक डबुल्या-51214

(31) आर्यिका श्री उपशान्तमती जी , आर्यिका श्री ऊँकारमती जी
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन वर्णीभवन, बाजार चौक, कर्रापुर- 470366 (सागर) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - अध्यक्ष- राकेश कुमार जैन, राकेश मेडीकल स्टोर्स (07582) 83237, बसंत कुमार जैन- 83216, नेमीचंद जैन-83267,

(32) आर्यिका श्री अकम्पमती जी, आर्यिका श्री अमूल्यमती जी, आर्यिका श्री आराध्यमती जी, आर्यिका श्री अचिन्त्यमती जी, आर्यिका श्री अलोल्यमती जी, आर्यिक श्री अनमोलमती जी, आर्यिका श्री आज्ञामती जी, आर्यिका श्री अचलमती जी, आर्यिका श्री अवगममती जी,
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर जी, गैरतगंज-464884 (रायसेन) म.प्र.
सम्पर्क सूत्र- श्री टेकचन्द जैन, अध्यक्ष (07481) 21237, संजय मेडीकल स्टोर्स-21522, गिरीश कुमार जैन- 43365

(33) ऐलक श्री दयासागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जी, कन्देली, नरसिंहपुर - 487001, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र-डॉ. सुधीर सिंघई, अध्यक्ष- (07792) 30715, विमल बड़कुल -30201, राजेश बजाज- 30243

(34) ऐलक श्री निःशंक सागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जी, छत्रपति नगर, एरोड्रम रोड, इंदौर-452005, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र : वीरेन्द्र कुमार जैन- (0731) 414773, मुलायम चन्द्र जैन- जैन मंदिर के सामने, डॉ. जिनेन्द्र कुमार जैन- 411125 (नि.), 546138 (का.), संजय जैन मेक्स-537522, मो.- 98260-37522,

(35) ऐलक श्री उदारसागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री नयसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जी, गोलगंज, छिंदवाड़ा- 48001, मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र- अशोक वाकलीवाल, बाम्बे ड्रेस हाउस, गोलगंज छिंदवाड़ा, फोन- (07162) 44860 (दु.), 42726 (नि.), मो.-98270-61926, जयकुमार गोयल-42268, अशोक जैन- 42660

(36) ऐलक श्री सिद्धांतसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी, घाटोल-(बांसवाड़ा) राजस्थान
सम्पर्क सूत्र - श्रीपाल कन्हैयालाल उमावत (02961) 20041, 20241, धनपाल जी जोधावत एडवोकेट-41741, 20400

(37) ऐलक श्री सम्पूर्णसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जी पालमगाँव- नई दिल्ली-110045
सम्पर्क सूत्र - बाबूलाल जैन, प्रधान- (011) 5085015, ज्ञानचन्द जैन-5083514, महेन्द्र कुमार जैन-5084321 सतीशचन्द्र जैन-5037152

(38) ऐलक श्री नम्रसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी बड़ागांव, धसान, (टीकमगढ़) म.प्र.
सम्पर्क सूत्र - पंडित सुरेन्द्र कुमार जैन (07683) 57334, हुकमचन्द हटैया-57228

(39) ऐलक श्री प्रभावसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर जी टड़ा- 470235 (सागर) मध्यप्रदेश
सम्पर्क सूत्र - श्री देशराज जैन एडवोकेट, छोटे जैन मंदिर के पीछे, टड़ा (सागर) म.प्र.

(40) क्षुल्लक श्री ध्यानसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरी, पो. मुक्तागिरि, (बैतूल) मध्यप्रदेश
मैनेजर- मुक्तागिरि सिद्ध क्षेत्र कमेटी, मुक्तागिरि, फोन-(07223) 21402

(41) क्षुल्लक श्री पूर्णसागर जी महाराज
चातुर्मास स्थली : श्रीदिगम्बर जैन मंदिर जी, चौपरा, नोहटा (दमोह) मध्यप्रदेश

नोट- आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित वर्तमान में 59 मुनि महाराज, 111 आर्यिकाएँ, 9 ऐलक महाराज तथा 5 क्षुल्लक महाराज जी, कुल 184 साधकगण मध्यप्रदेश, राजस्थान, कर्नाटक, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ एवं तमिलनाडु प्रान्तों में वर्षायोग कर धर्मप्रभावना कर रहे हैं।

कः पूज्यः सदवृत्तः कमधनमाचक्षते चलितवृत्तम्।
केन जितं जगमेतत् सत्यतितिक्षावता पुंसा।।

पूज्य कौन है? सच्चरित्रवान्। निर्धन किसे कहते हैं? चरित्र हीन को। संसार पर विजय प्राप्त कौन करता है? सत्य और क्षमा से युक्त पुरुष।

कस्मै नमः सुरैरपि सुतरां क्रियते दयाप्रधानाय।
कस्मादुद्विजितव्यं संसाराारण्यतः सुधिया।।

देवों के द्वारा भी वन्दनीय कौन है? दयाशील मनुष्य। भयभीत किससे होना चाहिए? संसाररूपी अरण्य से।

कस्य वशे प्राणिगणः सत्यप्रियभाषिणो विनीतस्य।
क्व स्थातव्यं न्याये पथि दृष्टादृष्टलाभाय।।

प्राणी किसके वश में होते हैं? सत्य और प्रियभाषी विनयशील मनुष्य के। मनुष्य को कहाँ स्थित रहना चाहिए? न्याय के पथ पर, क्योंकि उसी पर स्थित रहने से इहलोक और परलोक में सुख होता है।

''णमो लोए सव्वसाहूणं''

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र : धन्यवाद, सुझाव शिरोधार्य

'जिनभाषित' का मई 2001 अंक प्राप्त कर हर्ष है। उसके विषय महत्त्वपूर्ण, प्रासंगिक और पठनीय हैं। 'जैन आचार में इन्द्रियदमन का मनोविज्ञान' पढ़ा। उन्मुक्त कामभोग का दुष्परिणाम एक भगवान् आचार्य के आश्रम में भी सुना, जहाँ सेक्स के लिये, गर्मी-सुजाक रोग के उपचार हेतु अस्पताल हैं। शम-दम से संवर होता है जो पूर्णरूपेण संवर में शामिल है। आपने ऐन्द्रियिक उत्तेजनाओं के शक्त्यनुसार क्रमिक दमन में इच्छाओं के नाड़ीतन्त्रीय स्रोत का निष्क्रिय होना बताया। क्या स्वदारसन्तोष इसका उपचार नहीं हो सकता?

विषयविषमाशनोत्थित मोहज्वरजनिततीव्रतृष्णस्य।
निःशक्तिकस्य भवतः प्रायः पेयाद्युपक्रमः श्रेयान्॥
(आत्मानुशासन 17) विचार करें।

परम पूज्य आचार्य श्री आदि गुरुओं के सदुपदेश, गोरक्षा के माध्यम से अहिंसा का पालन, जीवनोपयोगी अनेक रचनाओं के कारण यह पत्रिका अत्युपयोगी है। सम्पादन, प्रकाशन सुन्दर है। धन्यवाद।

पं. नाथूलाल जैन शास्त्री
40, हुकुमचन्द मार्ग, इंदौर-2 म.प्र.

'जिनभाषित' पत्र का मई 2001 का अंक प्राप्त हुआ। बहुत प्रसन्नता हुई। प्रथम तो अंक का कागज, छपाई, बनावट आदि भी बहुत सुन्दर है। दूसरे सभी लेख पढ़ने योग्य आगमानुसार हैं। इस प्रयास के लिये आपको हार्दिक धन्यवाद।

पं. लाड़ली प्रसाद जैन पापड़ीवाल
सवाई माधोपुर, (राजस्थान)

'जिनभाषित' के अप्रैल-मई के अंक मिले। अद्वितीय अनुपम, आकर्षक है यह पत्रिका। इसे सत्यं, शिवं, सुन्दरम् भी कहा जा सकता है। सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक सभी साधुवाद के पात्र हैं।

अनूपचन्द्र जैन, एडवोकेट
फिरोजाबाद (उ.प्र.)

'जिनभाषित' पत्रिका देखी। पहली ही बार में आद्योपान्त पढ़ डाला। अभिनव कलेवर, आकर्षक साज-सज्जा और मौलिक सामग्री पत्रिका का वैशिष्ट्य है। ''जैन आचार में इन्द्रियदमन का मनोविज्ञान'' लेख स्वच्छन्द भोगवादी लोगों को एक नई दिशा देता है। साथ-साथ ओशो को भी यह सटीक जवाब है। सच में, इन्द्रियदमन की नई अवधारणा को प्रकट कर आपने जैनाचार की युक्तियुक्तता एवं वैज्ञानिकता को स्थापित किया है। आपके इस स्तुत्य प्रयास के लिये कोटिशः धन्यवाद।

उत्तमचन्द्र जैन, एडवोकेट
लिंक रोड, सागर (म.प्र.)

'जिनभाषित' मई 2001 अंक मिला। '1200 मवेशी कटने से बचे' समाचार वास्तव में विशेष है। इस सम्बन्ध में सागर नगरवासियों की सक्रियता सराहनीय है। गोरक्षा के क्षेत्र में आचार्यश्री द्वारा किये गये ठोस, व्यावहारिक दिशानिर्देशन से जीवदया का यह क्षेत्र सक्षम एवं व्यापक हो सका है। इन्द्रियदमन की आवश्यकता को वैज्ञानिक एवं तार्किक ढँग से बताकर आपने कई लोगों की शंकाओं का समाधान किया है। आसक्ति, आदत को दूर करने के लिये मन और तन पर लगाम तो लगानी ही पड़ेगी।

आशा है 'जिनभाषित' माँ जिनवाणी की सेवा करते हुए समाज को ऐसा सोच देगा, जिससे समाज, सत्य, अहिंसा, अनेकान्त पर बद्धचित्त होकर रचनात्मक कार्यों के द्वारा व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास की ओर अग्रसर हो सकेगा।

अजित जैन 'जलज'
ककरवाहा (टीकमगढ़) म.प्र.

'जिनभाषित' के अप्रैल और मई 2001 के अंक प्राप्त हुए। भतीजा बोला 'दादाजी! 'इंडिया टुडे' में ऊपर कवर पर भ. महावीर स्वामी का एवं गोम्मटेश्वर म. बाहुबली का फोटो छपा है। मैंने ध्यान से देखा तो पाया यह तो जैन/मासिक पत्रिका है और उसके लेख व सम्पादकीय उच्चकोटि के हैं। अप्रैल के अंक में छपा लेख 'महावीर प्रणीत जीवनपद्धति की प्रासंगिकता' एवं मई के अंक में छपा लेख 'जैन आचार में इन्द्रियदमन का मनोविज्ञान' अनूठा है, जो आपके मौलिक चिन्तन की गहराइयों से भरा, मन को छूने वाला हैं। श्रुतपंचमी सम्बन्धी सभी लेख भी उत्कृष्ट है। 'अतिनिन्दनीय और अतिप्रशंसनीय' भी श्रेष्ठ बोधकथा है।

ब्र. हेमचन्द्र जैन 'हेम'
कुन्द-कुन्द छाया, एम.आई.जी. 10/ए,
सोनागिरी, भोपाल-462021

'जिनभाषित' का मई 2001 का अंक मिला। पहली बार जैन समाज की श्रेष्ठ पत्रिका इधर देखी, जबकि भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मोत्सव राष्ट्रव्यापी रूप में मनाया जा रहा है। आपने पत्रिका में सारगर्भित, ज्ञानवर्धन और नानाविध सामग्री संकलित की है। पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के दो लेख/प्रवचन अच्छे लगे। श्रुतपंचमी पर आचार्य श्री ने अच्छा प्रकाश डाला और सम्पादकीय भी इस विषय पर पसन्द आया। एक लेख में 'मूकमाटी महाकाव्य' पर प्रशासनिक दृष्टि से विचार किया गया है। पं. फूलचन्द्र जी का लेख उत्तम है। शंकासमाधान ज्ञानप्रद तथा मार्गदर्शक है। ऐसी उत्तम पत्रिका के लिये हार्दिक बधाई।

प्रो. निजामुद्दीन, मोहल्ला- साजगरीपोरा
श्रीनगर-190011 (जम्मू-कश्मीर)

'जिनभाषित' पत्रिका पढ़कर प्रसन्नता हुई। 'श्रुतपञ्चमी' सम्पादकीय में जैनजगत का वर्गीकरण और निष्कर्ष पढ़कर अच्छा लगा। 'स्वाध्यायः परमं तपः' की सिद्धि और उसका व्यवहाररूप पुनर्विचार हेतु प्रेरित करता है। यह आश्चर्य है कि प्रत्येक वर्ग अपने को अल्पसंख्यक वर्ग (अन्तिम वर्ग) की श्रेणी में मानता है। भ्रम कैसे दूर हो, विचारणीय है। आचार्यश्री का आलेख 'ज्ञान और अनुभूति' मननीय है। 'सम्यक् श्रुत' आलेख ज्ञानवर्धक है। आकर्षक साजसज्जा एवं कुशल संयोजन हेतु बधाई।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
बी/369, ओ.पी.एम. कालोनी
अमलाई-484117 (शहडोल) म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जिनभाषित' जून 01 का अंक प्राप्त हुआ। अंक बहुत ही अच्छा लगा। मुनिश्री के शब्द 'जिनवाणी माता की चिट्ठी' पढ़कर रोमांचकारी अनुभूति प्राप्त हुई। 'माता की चिट्ठी' का यह रूप अबाधित रखना, 'जिनभाषित' को इसी स्तर पर हमेशा प्रकाशित करना एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। और आप जैसे आगमनिष्ठ, प्रतिभाशाली, जिनवाणी-भक्त ही यह जिम्मेदारी सुचारुरूप से निभा सकते हैं। आदरणीय पं. रतनलाल जी बैनाड़ा जैसे स्वाध्यायरत, लक्ष्मी-सरस्वती दोनों के कृपापात्र श्रेष्ठी का साथ आपको प्राप्त है। प. पू. आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का आपके ऊपर पावन वरदहस्त है। मुनिश्री समतासागर जी और मुनिश्री प्रमाणसागर जी से भी आपको शुभाशीष मिला है। निश्चय ही आपके कुशल और तत्त्वदृष्टिसम्पन्न सम्पादन में यह पत्रिका अपना नाम सार्थक करेगी।

प्रा. रतिकान्त शहा जैन
'कमलायतन' शिवाजीनगर, मेनरोड
कोरेगाँव (सातारा) -415501
महाराष्ट्र

'जिनभाषित' का अप्रैल 2001 का अंक प्राप्त हुआ। पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। आपने इस पत्रिका का प्रकाशन भगवान् महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक-महोत्सव वर्ष में प्रारंभ किया तथा पत्रिका के नाम के अनुरूप ही विभिन्न विषयों से सम्बन्धित लेखों का समावेश किया है, जो अत्यंत प्रशंसनीय है। आध्यात्मिक एवं धार्मिक लेखों के साथ अन्य ज्ञानवर्धक लेखों ने भी पत्रिका की उपयोगिता को द्विगुणित किया है। पत्रिका का मुख-आवरण अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक है। छपाई भी उत्तम है। इस सुन्दर पत्रिका के प्रकाशन हेतु आप बधाई के पात्र हैं।

के.सी. विनायका
श्रीमती आशा विनायका
ए-34, रविशंकर शुक्ल नगर
इंदौर- 45211

'जिनभाषित' पत्रिका पढ़ी। अच्छी लगी। हमें पूर्ण आशा है कि यह पत्रिका समाज में अपना विशिष्ट स्थान अवश्य बनायेगी। परन्तु आप इसे व्यक्तिवाद से बचाकर रखियेगा, क्योंकि जिस पत्रिका में व्यक्तिवाद आ गया, बस वह पत्रिका समाप्त ही हो गई। इसका कवर पृष्ठ बहुत ही सुन्दर व आकर्षक लगा।

शुद्धात्मप्रकाश जैन प्राकृताचार्य
श्री लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रीय
संस्कृत विद्यापीठ, कटवारिया
सराय नई दिल्ली- 110016

'जिनभाषित' मासिक पत्रिका के प्रायः अभी तक के सभी अंकों को पढ़ने का सौभाग्य मिला। समय-समय पर सुखद अनुभूति के साथ ही ज्ञान, मनन तथा चिन्तन में वृद्धि हुई। मेरा विनम्र सुझाव है कि जैनसमाज के ऐसे व्यक्तियों से निरन्तर परिचित कराने की शृंखला जारी करें, जिन्होंने नये आयाम स्थापित किये हों। साथ ही 'जैनधर्म/जैनदर्शन की ऐसी लेखमाला शुरु की जावे जो बच्चों के साथ ही साथ युवकों में भी ज्ञान का संचार करे। 'जिनभाषित' परिवार को मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

डॉ. चन्दा मोदी
सी/3, एम.पी.ई.बी. कालोनी
विद्युत नगर, रामपुर, जबलपुर (म.प्र.)

'जिनभाषित' का मई अंक प्राप्त हुआ। उसे प्रारंभ से अन्त तक एक साथ ही पढ़ा। यह पत्र बहुत ही उपयोगी, शिक्षाप्रद और सुन्दर रूप में प्रकाशित करके आप महान् परोपकार कर रहे हैं। मई अंक में आपका सम्पादकीय एवं 'जैन आचार में इन्द्रियदमन का मनोविज्ञान' एवं सभी लेख बहुत ही उच्चकोटि के हैं। 'जिनभाषित' को आपने सुरुचिसम्पन्न प्रकाशित किया है। मेरे पास 100 जैनपत्र आते हैं। उनमें 'जिनभाषित' सर्वश्रेष्ठ है। आपको हार्दिक बधाई।

डॉ. ताराचन्द्र जैन बख्शी
बख्शीभवन, न्यू कालोनी
जयपुर - 302001 (राजस्थान)

सर्वधर्म महिला सम्मेलन का आयोजन

इंदौर। 10 अप्रैल 2001 सशक्त परिवार और अशक्त राष्ट्र का निर्माण सशक्त नारी द्वारा ही संभव है और भगवान महावीर ने नारी शक्ति को सम्मान देकर जो गौरव प्रदान किया है वह आज भी प्रासंगिक है। उक्त विचार केन्द्रीय राज्य महिला बाल विकास मंत्री श्रीमती सुमित्रा महाजन ने भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव दिगम्बर जैन राष्ट्रीय समिति के तत्त्वावधान में अखिल भारतवर्षीय महिला परिषद् द्वारा आयोजित सर्वधर्म महिला सम्मेलन के अवसर पर व्यक्त किये। उन्होंने कहा कि मादा भ्रूण हत्या एवं नारी पर हो रहे अत्याचार को नारी को स्वालम्बी साक्षर और स्वस्थ बनाकर ही रोका जा सकता है। महिला परिषद् के कार्यों की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा कि भगवान महावीर के 2600वें जन्म महोत्सव वर्ष और महिला सशक्तीकरण वर्ष में जो आपने 2600 महिलाओं और 2600, बालकों को शिक्षित करने एवं स्वावलम्बी बनाने की तथा 2600 पेड़ लगाने की जिम्मेदारी ली है वह प्रशंसनीय है।

कार्यक्रम संयोजिका एवं केन्द्रीय अध्यक्षा श्रीमती आशा विनायका ने अतिथियों का स्वागत करते हुए कहा कि महावीर के सर्वोदय धर्मतीर्थ और सर्वजातिसद्भाव के अनुसार आज सर्वधर्म महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया है और आत्मकल्याण और विश्वकल्याण की भावना को साकार करने के लिये संस्थाओं एवं सभी धर्म की सामाजिक कार्यकर्ता महिलाओं को कार्यक्रम के साथ जोड़ा गया है ताकि महावीर के सिद्धान्त तथा जियो और जीने दो का संदेश फैलाने और पर्यावरण, सामाजिक शान्ति एवं लोकसेवा के कार्यक्रम में उन्हें साझीदार और सहभागी बनाया जा सके।

श्रीमती आशा विनायका, इन्दौर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रोज हम

ये दीप धूप
ये गंध
मानो कह रही है
हमारी ही है यह
आत्म-सौरभ-अगंध
ये गीत-गान
वन्दना के छन्द
मानो कह रहे हैं
हमारा ही है यह
आत्म-गान अमन्द
ये प्रतिमा
अपलक निष्पन्द
मानो कह रही है
हमारा ही है यह
आत्म-दर्शन अनन्त
रोज हम
इनके करीब आयें
और इन्हें
अपने में-पायें
पुलक उठें
मनः प्राण।

- मुनि क्षमासागर

अन्तर

ये मंदिर
इसलिये कि हम
आ सकें
बाहर से
अपने में भीतर
ये मूर्तियाँ
अनुपम सुन्दर
इसलिए कि हम
पा सकें
कोई रूप
अपने में अनुत्तर

और
श्रद्धा से झुककर
गलाते जाएँ
अपना मान-मद
पर्त-दर-पर्त निरन्तर
ताकि
कम होता जाए
हमारे
और प्रभु के
बीच का अन्तर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जय श्री वीर जिनवीर जिनचन्द

कविवर दौलतराम

जय श्री जिनवीर जिनचन्द, कलुष-निकन्द मुनिहृद सुखकन्द।।
सिद्धारथनंद त्रिभुवन को दिनेन्द-चंद, जा वच-किरन भ्रम-तिमिर-निकन्द।
जाके पद अरविन्द सेवत सुरेन्द्रवृंद, जाके गुण रटत कटत भव-फन्द।।
जाकी शांतमुद्रा निरखत हरखत रिषि, जाके अनुभवत लहत चिदानंद।
जाके घातिकर्म विघटत प्रगट भये, अनंत दरश-बोध-वीरज-आनन्द।।
लोकालोक-ज्ञाता पै स्वभावरत राता प्रभु, जग को कुशलदाता त्राता अद्वंद।
जाकी महिमा अपार गणी न सके उचार, 'दौलत' नमत सुख चाहत अमंद।।

अर्थ

पापों को नष्ट करने वाले और मुनियों के हृदय को अपार सुख देने वाले श्री वीर जिनेन्द्र की जय हो, महावीर जिनेन्द्र की जय हो।

श्री महावीर जिनेन्द्र राजा सिद्धार्थ के पुत्र हैं और तीनों लोकों के लिए ऐसे सूर्य-चन्द्र हैं, जिनकी वचनरूपी किरणें भ्रमरूपी अन्धकार को समाप्त कर देती हैं। इन्द्र-समुदाय भी उनके चरण-कमलों का सेवन करते हैं। उनके गुणों के जाप से संसार के बन्धन कट जाते हैं।

उन की शान्त मुद्रा को देखकर ऋषिगण भी हर्षित होते हैं, क्योंकि उसका अनुभव करने से चैतन्य के आनन्द की प्राप्ति होती है। उनके चार घातिया कर्म नष्ट हो गये हैं और अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य एवं अनन्त सुख प्रकट हो गये हैं।

वे सम्पूर्ण लोकालोक के ज्ञाता हैं, फिर भी अपने स्वभाव में पूर्णतया लीन हैं। वे जगत के प्राणियों को कुशलता प्रदान करने वाले हैं और उनके सच्चे रक्षक हैं।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि श्री महावीर जिनेन्द्र की महिमा अपार है, गणधर भी उसका वर्णन नहीं कर सकते, मैं अनन्त सुख को चाहता हुआ उनको नमस्कार करता हूँ।

आर.के. मार्बल्स लि.
किशनगढ़ (राजस्थान) के सौजन्य से

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org